चेतचन्द्रिका ।

अर्थात्

श्री बैकुंठवासी महाराजा चेतसिंह की आ-
ज्ञानुसार श्री रघुनाथ कवि के पुत्र गोकुल-
नाथ कवि कृत सविधि अलंकार वर्णन ।

"नित्य अन्हात है छीरधि में ससि तो मुख की
समता लहिबे को"

श्रीयुत बाबू चन्द्रेश्वरप्रसाद सिंह रईस चै-
नपुर जिला छपरा के प्रसन्नतार्थ डुमराँव-
निवासी नकछेदी तिवारी द्वारा प्रकाशित ।

यह पुस्तक काशी भारतजीवन प्रेस के अधिकार से
छपी और उसी प्रेस में मिलैगी ।

काशी ।

भारतजीवन प्रेस में मुद्रित हुई ।

सन् १८९४ ई० ।

प्रथम बार १०००] [मूल्य ।)

चेतचन्द्रिका ।

कवित्त ।

सिंदुरभरो भसुंड एक दन्त सोहै मानो जस जगदीश ताको दीसै वड़ी रती को। रिद्धि लए सिद्धि लए सुमति सम्रद्धि लए लम्बोदर लोनो है सदन सरस्वती को ॥ चारौ फलदायक सहायक है साँकरे यों सिद्धयै चरन छुहै मति महामती को। गोकुल कहत महादेव को लड़ाइतो है गजमुख चन्दभाल लाल पारबती को ॥ १ ॥

अपरञ्च ।

कटै त्रयताप दाप व्यापै भवभय की न कलुष नसात गन मिटत कलेस के । सुवुधि वढ़ति मुख लालिमा चढ़ति चारु कुमति उठति तम देखि ज्यौं दिनेस के॥ गोकुल कहत गुनगन सरसत बर मोद दरसत जस गावैं सब देस के।

धाम बीच बसै आइ कमला अचल ह्वै कै सेवत बिमल पदकमल गनेसकौ ॥ २ ॥

अथ गुरुचरणस्तुति।

दारिदहरन भवभयउधरन चारु वारिज-बरन मन मधुप थितौतहीं। कामना-भरन फरे चारिहू फरन अंधतिमिरहरन रवि रूप से हितौतहीं॥ गोकुल कहत मोद महत ल-हत जन जिताई चहतु है रहतु है तितौतहीं। औढरढरन असरन के शरन महामंगलकरन गुरु-चरन चितौतहीं ॥ ३ ॥

दोहा।

भजत पंथ बलिभद्र गुरु के धरि पद पर माथ।
भयो कृतारथ जगत मे मतिमत गोकुलनाथ॥४॥
दरन सकल भवभय लखें भरन मोद मनरंज।
भुवनेस्वरि जगदम्ब के थपु हिय सर पदकञ्ज॥५॥
श्रीगुरुपदबरनन कियो इष्ट चरन दरदंद।
अब मै बरनन करत हौं ध्यान सहित नदनंद॥६॥

अथ श्रीकृष्ण को ध्यान – कवित्त ।

पियरी पगिया पर मोरपखा गति बायु लगें चलभावत है । परि गोधनरेनु रही मुख पै बढ़ि स्वेदकनों छबि छावत है ॥ करि गाइन गोकुल आगे हरे हरें बाँसुरी मंद बजावत है । इत आइ लखौ वह कारो अहीर को कालिंदी-कूल तें आवत है ॥ ७ ॥

पेँच खुले पगरी के उड़ैं फिरैं कुण्डल की प्रतिमा मुख दौरी । तैसियै लोल लसैं जुलफैं रत एही न मानति धावति धौरी ॥ गोकुलनाथ किये गति आतुर चातुर की छबि देखिन बौरी। ग्वालनि तें बढ़िजात चल्यौ फहराति काँधा पर पीत पिछौरी ॥ ८ ॥

डोलि परै मग मे पग री पगरी तें खुले तिमि पेच सुहावत । चंद सो आनन स्वेदभरो मुकुले अरबिन्दनै नैन लजावत॥ गोकुल गौँ जो प्रसूनहरा लपटो हिये हेरि हियो हुलसावत ।

कौन सोहागिनि को भरि भाग भरे अनुराग चले हरि आवत ॥ ९ ॥

ललित कपोलनि पै कुंडल कलित लोल छूटे काकपच्छ ते वे ड़ौलै लगे बात है। लटपटी पौरी पाग पर सोहै मोरपच्छ झपकोले अच्छ मुकुलित जलजात है॥ गोकुल किसोर वह कौन को कहां को हैरी चित चढ़ि गयो मेरे कछु न सोहात है। जात कुञ्जघातें जमुना को हौं बिलोक्यौ आजु साँवरो सो लटपटे पगनि प्रभात है ॥ १० ॥

गोधन ते जमुना की ओर तें हमारी खोरि आइ गयो छाइ छबि मुकुट बिसाल को। गौवन को घेरनि लकुट की सुफेरनि त्यों बाँसुरी की टेरनि लफनि बनमाल को॥ गाकुल कहत पीतपट की चटक चारु भौंहन की मटक लटक लोनी चाल की। भूलति न ता छिन तें गड़ि रही आँखिन में साँवरी सलोनी वह मूरति गोपाल की ॥ ११ ॥

अथ कबिप्रशंसा—दोहा ।

मनबचकर्मनि कै करै सबही को उपकार ।
लहत सुकबि या जगत में ज्यों सुरसरि की धार ॥
ऐसो सरल सुभाव लखि बुधजन को सुखदान ।
जथा उक्ति हौंहूं करी कबिता सुनहु सुजान॥१३

सोरठा ।

लखि जग को व्योहार, भ्रम तजि हौं कबिता करी।
मनि मोतिन के हार, लेत लेत कोउ पोति के॥१४
मनि गुन अगुन बिचार, जानत जे जग जौहरी ।
कह जानत मनिहार, मनिहारन के मोल गुन॥१५

अथ बंसबर्णन—दोहा ।

ब्रम्हा के मनु ते भयो गौतम मुनि तपधान ।
ज्यों हर के गननाथजू ज्यों कस्यप के भान॥१६॥
गौतम के कुल में भयो कौटूमिश्र महान ।
तेजपुंज तपधाम यों ज्यों बसिष्ट भृगुभान ॥१७॥

कबित्त ।

प्रानायाम साधै अवराधै परमातमा को गौतम के कुल को कमल सो गुनो परै । जाको नाम

लेत देत खेद तीनौं तापन के देह मे ते पापन को पुन सो धुनो परै ॥ गोकुल कहत द्विजराज द्विजराज बंस साधुमनहंसन को आनद पुनो परै । महा तपधाम अभिराम जगती मे आज ऐसो कोदू मिसिर को सुजस सुनो परै ॥१८॥

दोहा ।

तपवर कोदू मिसिर को बरनि कहाँ लो जाइ।
धोती जाकी बायु बस नभ मे परी झुराइ॥१९॥
कासिराज तिनको दियो परम दतरियाग्राम ।
ज्यौं कुवेर को हर दई अलकापुरी ललाम॥२०॥
कुल मे कोदूमिस्र के भये जीवधन भूप ।
ज्यौं छीरधि के कामतरु सुधासुधा सु अनूप॥२१

कवित्त ।

देवद्विज पूजे परमातमा को कूजै सौंहैं लगत न दूजै और भूप बने अन के । गुनी गुनगाहै ध्रुवधरम उमाहै खग्ग खेलन सो वाहै अरि चाहै सोहैरन के ॥ गौतम अमान महादानि बाहुबल बीर गोकुल निहाल करै दीन देखि छन

के ! मनको पयोधि लखै सोधि भलीभाँतिन सों अगन सघन गुनगन जीवधन के ॥२२॥

दोहा।

ऐसे जिवधन के भये मनरञ्जन धनधाम ।
पुरसोतम के काम ज्यौं ज्यौं दशरथ के राम॥२३

कवित्त।

धरमधुरंधर पुरंदर मही को महाजङ्ग जुरे मंदर सो पालक मुनीन को । गोकुल सुकबि जस पढ़त जगत जाको चन्द्रमा सो चारु चढ़ो सरद पुनीन को ॥ दीहदानि गौतम कौं कीरति लता को लखो बरस हजारन लौं सुमन लुनीन को। बैरिन को गंजन है भंजन दरिद्र-दीह रंजन करत मनरंजन गुनीन को ॥ २४ ॥

दोहा।

मनरंजन के यों भये भूपति मंसाराम ।
सैनानी हर के भये पुरुसोतम के काम ॥ २५ ॥

कवित्त।

रजत को धरा धराधर करपूर कैसे नीर सब

छीर होत सुखमा की रुख तें । सुमनसमूह होत मालती के जूह लखे द्योस कैसे चन्द होत मंद अरि दुख तें ॥ गोकुल कहत निसि द्योस रैनि राका होति कुमुद से नैन सबही के भरे सुख तें । महाराज मंसाराम राइ को पढ़त जस सुधा कैसी धारा स्रवै कविन के मुख तें ॥२६॥

दोहा ।

ऐसे मंसाराम के महाबीर बरिवण्ड ।
उयो उदैगिरि तें मनो ग्रीषम तरनि प्रचण्ड॥२७॥

कवित्त ।

साधुन को पूजै परमारथ को कूजै सोहैं गनत न दूजै रनपर तें प्रचण्ड के । सज्जन को पालै खलदलन को घालै हिये भूपन के सालै सदा जोरि भुजदण्ड के ॥ गोकुल हरत दीन-दारिद को देखतहीं पेखतहीं जे न देत दण्ड ते अदण्ड के । पावै कौन पूरन पयोनिधि को पार कौन गावै गुन सिगरे महीप बरिवण्ड के ॥ २८ ॥

साहस को सायर है माहिर सुबुद्धिन मे तीक्षन प्रताप लखें लखें मारतण्ड सो। गुरुता को बिन्ध सिन्धु पानिप को सूरता को कूरता को काटि कै करत खण्ड खण्ड सो॥ गोकुल सुकबि सदा दीनतरुवरनि पै कंचन बरस हुतो धन के घमण्ड सो। मण्डन मही को खल-दलन को खण्डन है आजलों न भयो भया भूप बरिबण्ड सो॥ २९॥

दोहा।

मिल्यौ नृपति बरिवण्ड सो महासुकबि रघुनाथ।
ज्यौं गुरु गुरुता सों भयो रहत सुरप्पति साथ॥३०

काशी में रघुनाथ कबि प्रगट्यो सुमति अमन्द।
बिक्रम के बैताल ज्यौं पृथीराज के चन्द॥३१॥

करे ग्रन्थ अनगनित जिन शास्त्रन के अनुसार।
अलङ्कार रस नाइका सहित छन्दबिस्तार॥३२॥

आदर करि बरिवण्ड नृप राख्यो कबि रघुनाथ।
दै हय गय रथ पालको दीन्हे अगनित गाथ॥३३॥

दियो ग्राम चौरा तिन्है सुरसरिता के तीर　।
सुरसरिता सी बसति जहँ ममति सुमति की भीर
सुकबि सहित बरिवराड नृप करि काशी को राज ।
तन तजि काशीश्वर भए सहकबि आनद-साज॥
द्वै सुत नृप बरिवराड के भए भरे मतिगाथ　।
जैसे शंकर के भए मैनानी-गननाथ　॥३६॥

सोरठा ।

जेठे नृप अवतंस, चेतसिंह राजा भए　।
पालतभुवदुज बंस,घालत जे खलदल सबल॥३७
लहुरे सिंह सुजान, महाबली दाता सुमति　।
जानत कछू न आन, चेतसिंह को हुकुम द्रुक॥

चेतसिंह को रूपबरनन ।

नौतन चेत महीप चितै मन बैरिन के धरै धीरज धन्धन । गोकुल साधु रहैं सुख सों खल के कुल भागि बसै गिरिरन्धन ॥ सेवक फूल भरे अनकूल भए प्रतिकूल ते कौन से अन्धन । छूटि परैं धनु बीरन के तरुनीन के टूटि परैं कटि-बन्धन ॥ ३८ ॥

स्वभाववर्णन।

ध्याइ गुरुचरन अन्हाइ सुरसरिता मैं लछिमीनरायन को पूजै साधु संग में। सभा बीच बैठे आइ यैंठे मन मोछन को सुभट सलाम लेत साहिबी उमंग में॥ गोकुल सिकार खेलै केहरि कुरंगन को भूप चेतसिंह हनै बैरिन को जंग में। कलावान कबिन सों कविता को ढंग देखि संग तरुनीन के रमत रतिरंग में॥ ४०॥

दोहा।

भए सुकबि रघुनाथ के तीनि पुत्र अभिराम।
क्रियावान उज्जल रहनि काव्यकला के धाम॥४१
बैजनाथ सब सों बड़े मध्यम गोकुलनाथ।
लघु गुरु गुरुता को धरै बिश्वनाथ जुतगाथ॥४२
गोकुल कबि पर करि कृपा चेतसिंह छितिपाल।
गाँव दियो घोरे दए दीन्हे दुरद बिसाल॥४३॥
फेरि सुकबि सों यों कह्यो करिकै अमित सनेह।
अलंकार मत में हमै ग्रन्थ एक करि देह॥४४॥

सोरठा ।

सुने नृपति के बैन गोकुलनाथ कृपा भरे ।
पाइ हियै मे चैन ग्रन्थ करन लागे तुरत ॥४५॥

अथ अलंकार के नाम ।

प्रथम एक उपमा कहौं कहौं अनन्वय एक ।
उपमानो उपमेय इक लहियत महित विवेक ॥
पांच प्रतीप कहैं सुकवि षट रूपक के रूप ।
इक परिनाम उलेख है सुस्मृत एक अनूप॥४७॥
भ्रांति एक सन्देह इक आपन्हुति षटभेव ।
उत्प्रेक्षा षटभेद सों बरनत है कबिदेव ॥४८॥
आपन्हव है एक औ षट सयोक्ति अनुमानि ।
तुल्यजोगिता चारि है दीपक चारि बखानि ॥
प्रति बस्तू उपमा सुइक है दृष्टांत सुएक ।
कहियत तीनि निदर्सना इक व्यतिरेक विवेक॥
एक सहोक्ति बिनोक्ति है समासोक्ति इक जानि।
परिकर कहियै एक इक परिकुरांकुरहि मानि॥
तीनि भेद अश्लेष के बरनत हैं सुखधाम ।
अप्रस्तुतपरसंस को एक भेद अभिराम ॥५२॥

प्रस्तुतांकुरो एक है परजायोक्ति अमन्द ।
है व्याजोक्ति अक्षेप के तीनि भेद दरदन्द ॥५३॥
एक बिरोधाभास है षट बिभावना होति ।
बिसेषोक्ति इक इक कहै आसम्भव की जोति॥
आसंगति है तीनि औ सात बिषम के रूप ।
तीनि भेद सम के कहत एक बिचित्र अनूप॥५५
अधिक दोइ है अल्प इक अन्योन्या है एक ।
बिसेसोक्ति के कहत हैं तीनि भेद गहि टेक॥५६
दोइ कहत व्याघात कबि कारनमाला एक ।
एक भेद एकावली माला दीपक एक ॥५७॥
सार एक क्रमिका सुइक है परजाय सुरीति ।
परिवृत एक कहैं सुकबि परिसंख्या इक रीति॥
एक बिकल्प कहैं सुकबि द्वैहि समुच्चै भेद ।
कारकदीपक एक है इक समाधि हरखेद॥५९
प्रत्यनीक बरनन करत अलङ्कार इक रीति ।
काव्यार्थापति एक बिध कहत सुकबि करि प्रीति॥
काव्यलिंग इक कहत हैं है अर्थान्तरन्यास ।
एक बिकस्वर एक बिध है प्रौढ़ोक्ति उजास॥६१

एक भेद सम्भावना इक मिथ्याध्यवसीत ।
ललित एक है तीनि विधि परहरषन सुभरीत ॥
एक बिषादन चारि बिधि है उल्लास अमन्द ।
आवज्ञा है एक औ एक अनुज्ञा चन्द ॥६३॥
ले सायक मुद्रा सुयक एकावली सुरीति ।
तदगुन इक इक अनगुनो कहत मिलित इक रीति
एक कहत सामान्य कबि औ उन्मीलित एक ।
और एक बैसेष्य इक गूढ़ोत्तर गहि टेक ॥६५॥
चित्रोतर इक एक है सूक्षम पीहित एक ।
इक व्याजोक्ति गुढ़ोक्ति इक विवृतोक्ति बिधि एक॥
जुक्ति एक लोकोक्ति इक इक छेकोक्ति सुढंग ।
काकु एक वक्रोक्ति इक सुभावोक्ति सुभ अंग॥६७
भाविक एक उदात है एक उत्तरा होत ।
पूर्वरूप अत्युक्ति इक एक कहत कबिगोत ॥६९॥
प्रेमात्युक्ति निरुक्ति इक एक भेद प्रतिखेद ।
विधि इक कहियत हेत इक अलङ्कार हित भेद॥

इति अलङ्कारों के नाम।

अथ अलङ्कार के रूप।

उपमा लक्षण।

उपमा कहत अवन्य को कहत वर्न्य उपमेय।
वाचक जो दुहु मधि रहत कहत धर्मगुन जेय॥
इन चारौ मिलि होति है पूरन उपमा पर्म।
बाचक तरे अवर्न्य के नित्य दुहून को धर्म॥७१॥

उदाहरण।

वारिज सो मुख मीन से नैन सिवार से बारन की सुखदा सी। कंबु सो कण्ठ लसै कुच को कसै भौंर सी नाभि भरी भ्रमभासी॥ गोकुल धार सी रोमावली लहरी सी लसी त्रिवली छबिरासी। लाल बिहार करौ रस मै वह बाल बनी सुख की सरिता सी॥७२॥

काहू चवाइन को कहिबो सुनि कै मन क्यौं भ्रम सो मसती हौ। को ब्रज में तुम सी तरुनी जेहि के डर सों जियरे मसती हौ॥ गोकुल प्यारे रहौ चिरजीव सदा जेहि के हियरे बसती हौ। काम से वै अभिराम लसैं तुमहू तो बनी रति सी लसती हौ॥ ७३॥

आनँद देत चकोर हितून को है खल कोकन को दुखदारो । कन्त है सन्त कुमोदन को कल चाँदनी कित्ति महा सितभारो ॥ गोकुल सील सुधा सरसै बरसै सुख है अतिही उजियारो । मन्द करै अरबिन्दन को जस चन्द सो चेत महीप तिहारो ॥ ७४ ॥

सोरठा ।

उदै सूर सों भाल, सिँदुरघसो गनेस को ।
हरत बिघन को जाल, जो जगव्यापक तिमिर को॥

अनन्वय लच्छन ।

उपमा उपमेयत्व जहँ एक वस्तु मे होत ।
नियत न बर्न्यं अबर्न्यं को सोऽनन्वय सुखसोत७६

जथा ।

मोहन के मन मोहन को पढ़ि मोहनिमंत्र को तंत्र लही हो । रूप की रासि समेटि सबै नख तें सिखलौं लै लपेटि रही हो ॥ गोकुल को तुम सो ब्रज मे तरुनी तिय मे सिरताज कही हो । भागभरी खुमसी सुख सो उमसी सुखमा तुम सी तुमही हो ॥ ७७ ॥

कवित्त ।

सुंदर सुसील सरवग्य साहिबी को सिंधु भारी भुजदण्डन को भूप सिरताज है। औढर-ढरन असरन को सरन सदा दुवनदरन जाके करन के काज है ॥ गोकुल सुकवि कहै महा-दानि दीनन को सुकबि प्रबीनन को पालत समाज है। कामै गुन पावै आहि तोमै सरिसा-है सुनो चेत सिंह ऐसो चेतसिंह महराज है॥७८॥

सोरठा ।

तोसी तुही न आन, लखी सुंदरी तरुनि तिय ।
हरि सौतिन को मान,तू बस कियो सुजान पिय॥

उपमानोपमेय लच्छन ।

उपमा को उपमेय करि फिरि ताको उपमान ।
उपमानो उपमेय तहँ बाचक धर्म समान ॥८०॥

यथा ।

प्रीतम के चख चारु चकोरन दै मुसुकानि अमी करै चेरो । रूप रसै बरसै सरसै नखता-वलि लौं मुकुतावलि घेरो ॥ गोकुल को तन-ताप हरै सब जौन भरै रबि काम करेरो । तो

मुख सो ससि सोहत है बलि सोहत है ससि सो मुख तेरो ॥ ८१ ॥

अपरञ्च कवित्त ।

कस्यप सो मारतण्ड चण्डकला मण्डल के कस्यपी हुते हो तेज पुंज मारतण्ड से । क्षीर सिंधु ऐसो सुधासिंधु सुधासिंधु ऐसे क्षीरसिंधु सोहत है लहरि घमण्ड से ॥ गोकुल कहत सुने जनक सरिस एते और मै न लखे सुनो भूपति उदण्ड से । भूप बरिवण्ड से महीप चेत-सिंह भए तुमही कै तुम से महीप बरिवण्ड से ॥ ८२ ॥

सोरठा ।

तो मुख ससि की जोर, ससि तो मुख सो ससिमुखी ।
पियचखचतुर चकोर, चाव चढ़े चाहत रहैं ॥

प्रतीप लच्छन ।

उपमा को उपमेय करि उपमेयै उपमान ।
जह वाचक अधवर्न्य कै कहै प्रतीप सुजान॥८४॥

यथा ।

जिनके पगपानि से पंकज ऊरु करी करकी

उपमा उपहै । लसै लंक सो चारि को अंक उरोजनि सोहै सिरीफल सोच गहै ॥ कबि गोकुल कराठ सो कम्बु कलाधर सारदी साँझ के माँझ चहै । उनके मुख सो ससि आजहि को पिय प्यारे प्रवीन कहै तो कहै ॥ ८५ ॥

गौतम चेत महीप बली अपने भुज के बल सों छिति पोसो । नास कर्यौ खल के दल को बल सो लहि दोस कछू जब रोसो ॥ दीन निहाल कर्यौ लखते कबि गोकुलनाथ गुनीगन मोसो । दानि महाफल चारि को हाइगो जानि परै कलपद्रुम तोसो ॥ ८६ ॥

सोरठा ।

तो पद से अनुमानि, अरुन अमल कोरे कमल ।
याही तें सनमानि, अवतंसित मोहन करे॥८७॥

तृतीय प्रतीप ।

उपमा को उपमेय करि भयो वर्न्य उपमान ।
लहत निरादर वर्न्य सो दूजो सुनो सुजान॥८८॥

यथा ।

दासी हौं मै बलि रावरे की यह मेरी कही

है सही मति लूनो । पेखियै आज कलानिधि को केहि भाँति कला धरि कै भयो दूनो ॥ गोकुल कैसी सुधा बरसै सरसै सुखमा लहि सारदी पूनो । देखियै तौ चलि भावती के मुखतें ससि आजु को होत न ऊनो ॥ ८९ ॥

सोरठा ।

चित दै चित औ लाल, तरुन अमल फूले कमल ।
उनके पगतें हाल, चलि बलि देखो सरवरै ॥ ९०

तृतीय प्रतीप ।

भयो वर्ण्य उपमान जो लाभ ताहि को होत ।
लहत निरादर तीसरो वर्ण्य अवर्ण्य जु होत ॥ ९१

यथा ।

को अपनी मति को जड़कै मतिमन्दन को गन को गहिहै हो । हासभरी ब्रजबासिन की चहुँ ओर तें को सुनि कै दहिहै गो ॥ गोकुलनाथ को संग करै तुमको पलप्रीति भरै चहिहै सो । चावचढ़ो चढ़ि चन्द कहा उनको मुख को सम कै कहिहै को ॥ ९२ ॥

अपरञ्च।

तन वैहरि ताप करैगी कितो सम तो बि-रहानल की झरसैं। अरी बीज नचैगी तीनीच कहा हम तोसी सी मीच महा परसैं॥ सुनि गोकुल काम कठोर कहा सरि तोहरि हेरि हिए तरसैं। सरसै घनघोर कहा मड़ि कै चख तोसे बियोगिनि को बरसैं॥ ९३॥

सोरठा।

एरे जलद अयान, बड़े बूंद बरसै कहा।
मेरे नैन समान, होन चहै ह्वै है कहा॥९४॥

चतुर्थ प्रतीप।

भयो बर्न्य उपमान जो, ता लहि जो उपमान।
भयो बर्न्य ताको कहत, मिथ्या चौथो जान॥९५

यथा।

पंकज पायन से कहियै कटि सी लखि काम की छाम अँगूठी। रोमवली सी भुजंग लखौ कुच सी छबि कोकनहूं की अनूठी॥ गोकुल आनन सो ससि जो कहियै गहिये उ-

पमा यह जूठी। भावती को मुसुकानि सी एजू
अमी कहिये सो तो लागति झूठी ॥ ९६ ॥

सोरठा।

तो मुख अमल अमंद,जोति भरो निसिदिन रहै
सरि करि करै पसंद, मुधा सुधाकर को कुमति॥

पंचम प्रतीप।

भयो वर्न्य उपमान जो ताको करि सनमान ।
व्यर्थ करौ उपमान को भयो जो वर्न्य समान ॥

यथा।

पग पानि सोहै पंकज न पेखियत कहा
लङ्क लखि चारिहू के अङ्क को लसनि है। गो-
कुल कहत मुख सुखमा समूह सौंहै कहा चंद्र
चंद्रिका बिलोकि बिहसनि है ॥ सौंहै रोम
अवली के नवली भुजंगो कहा कुचन के आगे
कहा कोक को गसनि है। एरी भागभरी तेरे
भौंहन के सौंहै कहा काम अभिराम के कमान
की कसनि है ॥ ९९ ॥

सोरठा।

लखिलखि तो पगपानि,ठकुराइनि राते अमल।
परै न कछु अनुमानि, ए कोरे किसलै कमल ॥

दोहा ।

या विधि पाँच प्रकार को कहै प्रतीप सुजान ।
होय बर्न्य आवर्न्य जहँ बर्न्य होइ उपमान॥१०१॥

रूपक लच्छन ।

बिसै कहत उपमेय को है बिसई उपमान ।
वाचक बिन ए जहँ मिलत तहँ रूपक सुखदान॥
क्रियारहित उपमान के लिए धर्म को अंस ।
मिलि अभेद तद्रूप तहं रूपक कहत प्रसंस १०३
न्यून अधिक सम होत है तीनि तीनि ए दोय।
या बिधि सों षट भेद को रूपक कहिये जोय॥

यथा ।

द्यौस निसा न परै पलको पल पेखिवेही के उछाह छए हैं। पान करै मुसुकानि अमीरस छाक छके अतिसै रमए हैं॥ गोकुल भूलि भरे सि ढरै ढिग भाग सोहाग के राग रए हैं । तो मुख चंद चितै उनके चख चाव चढ़े ते चकोर भए हैं॥ १०५ ॥

कंचुकी स्याम घटा घन की विज्जुरी जरी

कोर कहै मन मेरो । जूगनू जोति जवाहिर की मुकुता बग के गन सों घन घेरो ॥ गोकुल रोमावली लतिका है मलै-जल सो लहरै भरो नेरो। पीतम के चख चातक को तप क्यों न हरै हिय पावस तेरो ॥ १०६ ॥

सोरठा।

तो मुख संकर सेइ, कर कमलनि मर पै अमल।
मैन महादुख देइ, पिय को हिय अचरज यहै ॥

न्यून।

कुंकुम राग परागभरी कछू स्यामताई मधुमत्त अली हो। राजति रोमावली बढ़ि नाल सो नाभि सरोवरनी तें चली जो ॥ गोकुल है हरि पूजिबे जोग जगै जिन सो मुखदान बली को। दंद हरै मकरंद बिना वृषभानलली कुच-कौल-कली तो ॥ १०८ ॥

सोरठा:

सोहै बिना पराग, नैन नलिन तो अति अरस ।
भरे अधिकअनुराग, पियचख अलिको सुखसदन।

अधिक।

चारु सुबास-भरी रस रास प्रकाम मई सुचि है रुचि घेरो। श्री को अबास धरे सुख आस करें पिय के चखभौंर बसेरो॥ गोकुल राग सोहाग सुनो लहि जोवन सूर सहायक नेरो। फूलभरो निसि द्यौस रहै मनभावति जू मुख पंकज तेरो॥ ११०॥

सोरठा।

तो कचघन जस लेत, बड़े बड़े धरनीधरै।
बिन माँगेही देत, जीवन पियचख चातकहि॥

तद्रूपक।

जगत की जोति एक ठौर बिधि सिद्धि करि मेरे जान तोको भली भाँतिन सँवारि कै। रूप गुन सरस सयान सुकुमारताई तोही मे छई है नीको बिधि निरधारि कै॥ गोकुल न बाहिर बगर के डगरि कहूं नजरि लगैगी री ब्रजरि नरनारि कै। दौरि दौरि देखन लगत गाँव गोकुल के तो मुख-सुधानिधि सुधानिधि बिचारि कै॥ ११२॥

अपरञ्च ।

दृच्छिन मे जिन्हे देखि लच्छन मे देखियत लच्छन सो अच्छन मे स्वच्छ निरधारि कै । ते वैं अनकूल भये आनद अतूल छए छोड़ि है नवेली मनमेली ते बिसारि कै ॥ गोकुल कहत रूप रंग रस बस महा छोह सों छए हैं भूली गति मति हारि कै । प्यारे के बसत चखचञ्चरीक आठो जाम तेरे मुखपंकज में पंकज बिचारि कै ॥ ११३ ॥

सोरठा ।

तो कुच संकर जानि, संकर अति आनंदभगे ।
रोमवली फनि रानि, नाभि कूप सों कढ़ि चली ॥
ता मुखससि ससि मानि, अगी बिंधुतुद भ्रम भगो ।
दौरि गहैगो आनि, याते दुरि पतिभौन भजि ॥

न्यूनतप ।

चञ्चल चलाक छरकायल छबीलि बड़े सुखमा सों खीलि खुले खेलत महानी के । रंगन सो भारे करतार के सँवारे मोहैं निरखत हारे जिन्हे मैनहूं की रानी के ॥ गोकुल पियारे के

हिया रे हरखित होत हेरतही ऐसे जग जन सुखदानी के। और की परत आँखें ढरकि न धोरे होत तेरे चख मीन लखे मीन बिन पानी के॥ ११६॥

सोरठा।

रूप सरित सरितान, कौन कहै तोको चतुर।
नाभी भौंर अमान, परि बूड़ै मन बारि बिन॥

अधिक।

फूल सों भरी है चारु चारुता हरी है सुकुमारता खरी है करी कर तें सँवारि कै। परन सों पूरी मढ़ी परिमल रूरी महा मण्डन महो की मेल होये है बिचारि कै॥ गोकुल गोपाललाल देखी है परेखी महूं तुमहूं चलो ही ललो पौर पै निहारि कै। वा दिन तें उनको लगो है मधुमता मन एरी कामलजा तू लतै है निरधारि कै॥ ११८॥

सोरठा।

सहस कहैं मतिमन्द, तो मुख बारिज बारिजहि।
फूल्यो रहै अमंद यह निसदिन लहि मित्र लग॥

बिसद अभेद ।

सोहत है सुकुमार अरुन अमल आकै दर-खतही जिनके अमोघ अघ न रहै । मोद मकरंद भरे सौध सुखमाके जाके मिलत पराग को मिलत चारो फर है ॥ गोकुल कहत है अनेक कामना के दानि जोहत हीं मिटत उताप हरवर है । श्रीपति के चरन सरोजन में बसो रहै भूप चेतसिंह तेरो मन मधुकर है ॥१२०॥

परिनाम लक्षण ।

होत बिषै बिषई जहाँ क्रिया करन के हेत ।
क्रिया धर्म उपमेय को है परिनाम सचेत॥१२१

यथा ।

कुछु भूपति को मरजी न मिलै अरजी सुकरी कितनी भतियां । कबि गोकुल रावरे को गुन रूप बिसूरत ज्यौं परचै छतियां ॥ निकुलाइ हिये सियराइ इतो कर-कंज लिखी पहुंचौ पतियां । फिरि बाँचि न चेत रहैं उचरैं तुव आनन अंबुज को बतियां ॥ १२२ ॥

सोरठा ।

तो चख कंजन कोर, दौरि दौरि अंजनभरी ।
पिय चितवत बरजोर, हरैं लेत हारैं न ये॥१२३

उल्लेखलक्षण ।

बहुविधि बर्नत बर्न्य को जहँ बहुजन सुखदान।
नियतारथ को भ्रम नहीं तहँ उल्लेख सुजान॥१२४॥

यथा ।

वेदुज बिराट कहैं ठाठ महिमा को कहैं देव-तरुबर दीन दानि बड़े गथ को। रघुकुल भान कहैं परम सुजान देखि जगत को ईस बीस बिसे पुन्य पथ को॥ गोकुल कहत मिथिला के पुरबासी राम बाम अभिराम रूप भावैं मनमथ को। भूप भुवमंडल को कहत हैं दिगपाल बैरी कहैं काल है तू लाल दसरथ को॥ १२५॥

काम कहैं कामिनी कलपतरु कहैं दीन भूप कहैं रूप है प्रचण्ड मारतंगड को। साधु कहैं सीलसिंधु बिंध कहै बीर भिरे गुनी ते ग-नेस कहैं मति की उमंड को॥ गोकुल कहत

हौं लहत हौं पुरंदर सो चेतसिंह भूप भयो भू-
रतखंड को । बैरी कहैं काल सान्न कहैं खल
दल देखि हितुन की माल कहैं लाल बरिबंड
को ॥ १२६ ॥

सोरठा ।

मौति कहैं हियसाल, लाल मान्न हिय की कहैं ।
सरमसीव गुरु बाल, कामलता अलिजन मवै ॥

द्वितीय उल्लेख लक्षण ।

एक करत जहँ वर्न्य को बहु भांतिन उल्लेख ।
नियतारथ को नियत करि पाइ सहस गुन भेख॥

यथा ।

सखिन के सुमति मे उकति काल कोकिल
की गुरुजन हूं के धुनि लाज की कथान की ।
फूलम अरून चरनम्बुज पै गुंज पुंज चाव सी च-
ढ़ति चंचरीक चरचान की ॥ प्रीतम के स्रवन
समीपही जुगुति होति काम तंत्र मंत्र के बरन
गुनगान की । सौतिन के कानन में हालाहल
ह्वै हलति एरी सुखदानि तो बजन बिछुवान की॥

सोरठा।

तू पिय के हिय बाल, सोनजुही की माल है।
सौतिन के उर साल, तुही सिरोमनि बधुन की॥

स्मृति लक्षण।

उपमा लखि उपमेय को स्मर्न सम्रृति है सोय।
बर्न्य लखे आवर्न्य की सुधि आएहू होय॥१३१

यथा सवैया।

वा दिन कालिँदी-कूल पै न्हात लख्यौ मुख रावरे रूप अमंदहि। ता दिन तें कछु ऐसी लसी है दसा जो बसी है गसे नंदनंदहि॥ गोकुल भूल भरे से रहैं न चहैं खिन खेलन के फरफंदहि। द्यौस में पंकज पेखो करैं सजनी रजनी भरि देखत चंदहि॥ १३२॥

सोरठा।

वा दिन औचक आइ, लखि तो आनन हरि गए।
ता दिन तें नित जाइ, हेरत कानन कंज के॥

भ्रांति लक्षण।

होत अतथ्यज्ञान जहँ रूप लखे सम जौन।
भ्रम को बरनत भ्रान्ति सब अलंकारमति तौन॥

यथा सवैया।

तोहि सहाइ बिना मन में यहि काम दयो कितनो दुख रोखि । गोकुल गौन कियो कित को इतनो चित तें हित को मन मोखि ॥ ऐसे कहै बिरहाकुल राम कहा कहिये हिय मे भ्रम पोखि । सोनजुही की लता लहि कै हिय सों गहि लावत हैं सिय धोखि ॥१३५॥

कबित्त ।

जानि मुखचंद चहूं ओर तें चकोर दौरैं चूसिबे को अमी चाहि चोचन पसारे ते । बोलि बरही के गन डगरि कगरि आवैं बारन बिलोकि धोखि जल घनकारे के ॥ गोकुल समीर संग फैलत सुगंध जानि माधुरीलता है छोड़ि कुंजन डरारे जे । कैसे कै बगर लौं डगरि आवै ए जू वह रगर परे हैं वे मधुप मतवारे ते ॥

सोरठा ।

री सखि मोहि बचाय, या मतवारे भ्रमर सों ।
डसो चहत मुख आय, भरमभरो बारिज गुनै ॥

संदेह लक्षण।

बहुबिधि बरनत बर्न्य जहँ नियत न तथ्य अतथ्य।
अलंकार संदेह तहँ बरनत हैं मति-पथ्य॥

यथा।

भूपति भगीरथ की कीरति की गैल कैधौं कैधौं सुरसरिता है जग-जन तारई। कैधौं सतो-गुन की धसी है धार धरनी पै कैधौं ध्रुव धरम की परम कला नई॥ गोकुल गोबिंद के सरस चरनांबुज तें कैधौं मकरंद को प्रवाह प्रगटा।वई॥ फूली फरी हरी दूहूंओर भूमिपाटी मध्य बसुधा बधू की कैधौं माँग मुकुतामई॥ १३९॥

कैधौं बिधि कञ्चन-जरीब धरी नापिबे को देखि कै अपार है पसार पुन्य थर को। कैधौं सेत सोने को रच्यौ है करतार जा पै पार गति लेत गन देवन को नर को॥ गोकुल सुपथ मन-मथ रथ को है कैधौं सतोगुन भू पै रस अदभुत ठर को। भोर हेरि सुरसरिता की ओर कैधौं परो पारावार·लों है प्रतिबिम्ब दिनकर को॥

अपरञ्च ।

महाराज चेतसिंह रावरी सभा में सोहैं दीपन समेत कैधौं रोसनी के भार हैं । कैधौं रितुराज मानि मेरे जान साहिब को फूलि देव· तरु कीन्हं प्रभा को पसार है ॥ गोकुल कहत रिद्धि सिद्धि भई कैधौं खुलि रावरे सुकृति पौधा सोभा के अगार हैं । जानि छितिकान्त चढ़े बि· मल बिमान कैधौं आये देखिबे को तुम्हे धरा के कुमार हैं ॥ १४१ ॥

सोरठा ।

यह केकी हरषाय, बोलि लखौ फिरि रोस कै ।
तौ कच समुझि न जाय, इहै मेघ अहिकुल किधौं॥

अपन्हुति लच्छण ।

मिथ्या कीजै सत्त को सत्य सु मिथ्या होत ।
आप्पन्हुति षट भेद सो बरनत है कविगोत ॥

यथा ।

छ्वै छिति को नभमण्डल लों ब्रह्मण्ड है चण्ड छटानि सों छावति । जानि परैगी घरी

पल में कवि गोकुल हैं हम तोहि सुनावति ॥ चन्द को तू करि मन्द बिचार सखी अबहीं नहिं तो तन तावति। आगि उठी बड़वानल तें बिन घाम की पूरब तें चलि आवति ॥ १४४ ॥

चाहि चाहि उरज उतङ्ग ओज भावतो को कटि टूटिबे को मन मेरो री डरत है। याकी कहा कहौं भई बकबात औरै कछू जानी ना परति बिधि कहाधौं करत है ॥ सौतिन को मन बन तारि डारिहै गो कहै गोकुल खुलो है कुम्भ नैननि परत है। बूड़ो हुता आनँद सों रूप के पयोनिधि में देख सोई मदन मतङ्ग उभरत है ॥ १४५ ॥

अपरंच।

गौतम-नरिन्द चेतसिंह तप तेज तेरो भगति को भाव सो सुन्यौ है जगदीस पै। लालसा बढ़ोहै चारु चारुता चढ़ो है महामोद सों मढ़ो है मेरे जान किसी सीस पै ॥ गोकुल नसनी को भार है रतन रयो चाहत असीस दयो

तोसि नृप ईस पै । आयो देखिबे को तुम्हें न-
जरि को ल्यायो धरि सहसफना को फनि देखो
मनि सीस पै ॥ १४६ ॥

सोरठा ।

यह ससि सखी न होय, बढ़ति ताप याकी लखें।
एक भई काढ़ि सोय, बिरहज्वाल चकचखुन तें ॥

हेतु अपन्हुति लच्चण ।

मिथ्या को सत कीजिये कछु कारन जहँ पाइ।
हेतु अपन्हुति कहत हैं ताहि सकल कबिराइ ॥

यथा ।

बेनी सों हमारी हारि पन्नग पिरारे भये जाइ
कै पुकारे हैं बिसारे चित चाय को । गोकुल
कहत दाट चाहत दयो है हारि आपनी लख्यौ
है यातें कुटिल सुभाय को ॥ चन्द को बिचार
करि मन्द मेरी बोर कह्यौ दौरि दुरी करी बेगि
बारन उपाय को । सहसौफननि घेरे दसहू
दिसानि आवै बिष बरसावै सेस साहेब सहाय
को ॥ १४८ ॥

सोरठा।

अरी पन्नगी पेखि, कुचगिरि-गह्वर तें कढ़ी ।
रोमबली नहि लेखि, चढ़त मेर याके लखि ॥

भ्रान्तापन्हुति लच्चण।

भ्रम सङ्का मन और के कछु कारन लखि होय।
टूरि करे कहि सत्य सो भ्रान्तापन्हुति जोय ॥

यथा।

नैन भरैं अँसुवानि ढरैं तन कंपत स्वास बढ़ी निरसैहै। सूखि रह्यौ मुख पीरी परी अँग खेदभरो सो छुये तपतैंहै॥ गोकुल छोड़ि भली हौं गईही लली अबहीं न गयो पल द्वै है। चैन की कौन करे चरचा सुनि ऐसेही ग्वाल गँवार जो गैहै ॥ १५२ ॥

सोरठा।

दृगजल काँपत सरीर,भयो पीत मुख ज्वर कहा।
एरी वहै अहीर, कछू बोलि टूत ह्वै गयो॥१५३

छेकापन्हुति लच्चन।

काहू के डर सों जहां कहै अतथ्य अरोपि ।
छेकापन्हुति कहत तहँ तुरित तथ्य को गोपि ॥

यथा ।

साँवरो सलोनो गात पीतपट सोहत सो अंबुज से आनन पै परै छबि ढरकी । मंत्र ऐसी जंत्र ऐसी तंत्र सी तरकि परै हँसनि चलनि चितवनि त्यौं सुघर की ॥ गोकुल कहत बन-कुंजन को बासी लखि हाँसी सी करतु है री काम कलाधर की । इतने मे बोलि और मिलि हरि सुखदानी ? नाहीं मैं कहानी कही राम रघुबर की ॥ १५५ ॥

सोरठा ।

मोहिं मिलो छबिजाल, चटक भरी अनुराग मै ।
अरी लही तू लाल, मै न लया महँगो हुतो ॥

कैतवापन्हुति लक्षण ।

व्याज बचन लीन्हे जहाँ कहियतु मिथ्या बैन ।
तहाँ कहत है कैतवापन्हुति जे मतिऐन॥१५७॥

यथा।

कैसो उयो धरि सीरे सुभाय को चाय महा चित में भरि चोखे । संग सरोज सखानि

लये दये भेष बनाय नछत्रनि ओखे ॥ गोकुल जानि कुमोदिनी सी हमको ब्रजचन्द बिना परिपोखे। पानिप प्रान पिएई सो लेत सखी यह सूर सुधाधर धोखे ॥ १५८ ॥

सोरठा।

बिनु पिय जानन बाम, समुझि पाछिले बैर को।
फूलन के मिसि काम, सखि बानन सो लखु हनै ॥

पर्य्यस्तापन्हुति लक्षण।

नियत अर्थ को छोड़ि कै अनियत अर्थ अरोप।
परजस्तापन्हुति कहत अलङ्कार करि चोप॥१६०

यथा।

पूरित सु बास रसरास है प्रकासमई जगत के जीवन को महामोद छाया है। हरि के सरस मन मधुप के बसिवे को बास को दएई रहै भरे दीहदाया जे ॥ गोकुल कहत जे हैं फूले सि सर सरिता मे ते न हैं कमल मन भरम भुलाया है। जन मन मानस मे फूलेई रहत तेई कमल कलामई चरन महामाया के ॥१६१॥

सोरठा ।

सुनि हरि होइ न बाम,अरी बाम तू बाम है ।
जो पिय पै बिनु काम,बाम भई निसुदिन रहै॥

उत्प्रेक्षालक्षन ।

ऊह कहत सम्भावना सो सिगरे मतिधाम ।
बस्तु हेतु फल में लखि कबिजन कहत ललाम ॥
आकृतफल कारन लहि और बस्तु की ऊह ।
होति जहाँ तहँ कहत हैं उत्प्रेक्षा कबिजूह ॥
बस्तु हेतु फल होत है दोइ दोइ बिस्तार ।
या बिधि सो षटभेद की उत्प्रेक्षा निरधार ॥
उक्त अनुक्त बिसै कहै बस्तुत्प्रेक्षा आम ।
सिद्धि असिद्धि बिसै कहैं फल हेतो अभिराम ॥

यथा ।

फागु मची बरसाने मे आज लखौ चलि कै जो कछू लखि जानौ । आलिन संग लली वृषभान की लाल सखान लये सुखसानौ ॥ ऐसी गुलाल की धूंधर मै तिन्हे गोकुलनाथ बिलोकि बखानौ । साँवन साँझ की माँझ सखो मिलि खेलत हैं चपला घन मानौ ॥१६७॥

आलस-भार भरे बिलसैं अँग गोकुल नैननि नींद भरी त्यौं। सोइ गई रति कन्त सों के थकि सो छबि आइ लखै न अरी क्यौं॥ रोमवली तिय की कुचबीच लसै श्रमवारि के बुन्दभरी यौं। है कनकाचलसानु के मध्य सिँगार-लता मुकुतान फरी ज्यौं॥ १६८॥

अपरंच।

जरी को बिछौना मसनंद जरदोजी, पैन्हे अंबर जरी को बड़ी सुखमा की पूर मैं। आनन्द सों भरो तापै बैठो नृप चेतसिंह गोकुल कहत जापै बरसत नूर हैं॥ रतन को हुक्का सोहै पेच नै अरुन कर आनन मिलत ऐसी देखि परै मूरतैं। बाँधि कै मृनालन सों पंकज कलानिधि को बस करि ल्यायो मन बरबस सूर पैं॥१६९॥

सोरठा।

मुकुतन भरी लखै न, अरी माँग या तरुनि की।
लहि ससिसासन सैन, नखतन की बेधैं तिमिर॥

अनुक्तविषय वस्तूत्प्रेक्षा यथा।

चमकै चपला झमकै जुगुनू रट भेकी भयानक लावत है। पिक झिल्लिन को गनमोरन सों मिलि कै अति सोर सुनावत है॥ कबि गोकुल प्यारी बिना गिरधारी कहौ अब कौन बचावत है। यहि ओर लखो छितिछोरहि तें घन बोरत सों चलो आवत है॥ १७१॥

सोरठा।

यह पछिवाहो पौन, माहमाँस को सुन सखी।
मनुहिमिगिरिकरिगौन,गिलेतुहिनआवतचल्यो॥

हेतूत्प्रेक्षा सिद्धविषया यथा।

पंकज से पानि पाय चन्द्रमा सो चारु मुख खञ्जन से नैन बैन माधुरी सों भरो है। उरज उतंग गङ्गधार सो लसत हार कम्बु ऐसो कण्ठकल कोकिल सो गरो है॥ नवली लता सौ रोमअवली औ गोकुल है नाभि सरसिंधु सोहै कापै जात तरो है। चारो जाम कामकला सिद्ध करिबे को मानो याते बिधि चार कैसो अङ्क लङ्क करो है॥ १७३॥

सोरठा।

निसिदिन भरो सुबास, तो आनन अम्बुज मनों।
यातें अलिगन पास, सुरस आस लागें लगे॥

हेतूत्प्रेक्षा असिद्धविषया।

बारि बीच बूड़े खड़े बारिज ते सूर सेवै तेरे पानि पाइन की चारुता समक्ष को। रोम-अवली को देखि नवली लवंगलता धीरज न धरति गहति यातें लग को॥ गोकुल उरोज अति उन्नतहि हारे देखि याही तें करे हैं विधि सानुमान नग को। रावरे की माँग की समान आंग पाइबे को यातें गङ्गधार देखो धोवै हरि-पग को॥ १७५॥

अपरञ्च।

मानुस कीट पछी पसु आदि लता तरु बारि समेत तयो है। चारिहु जाम थक्यौ बल कै पर गोकुल कोऊ कहूं न गयो है॥ खीस भरो सो मिल्यौ यहि को सजनी यह वाहू तें ज्वालजयो है। जारिबे को निसि द्योस मनो ससि को सब सूर कलानि दयो है॥ १७६॥

सोरठा ।

तू मनमथ को बान, जानि पर्‌यौ दच्छिन पवन ।
तोहि करै पणिपान, मनु यातें हरहित करै ॥

फलोत्प्रेक्षा सिद्धविषया ।

आवति हौं गुन गौरि लखे तरुनापन सों सब आंग भरे हैं । गोकुल काम कलाकलबीन है नैन सों मैन के बान हरे हैं ॥ कञ्चनदाम सो छाम चितै कटि पै त्रिवली बिधि बन्ध नरे हैं । बोझ उरोजन को धरिबे को मनो बिधि पीन नितम्ब करे हैं ॥ १७८ ॥

अपरंच ।

साँझहि तें रचि सेज सखी सुखदानि सबै रति सौज सँवारे । भूषन अङ्ग जराइन के सजि अंजन आंजि कै नैन सुधारे ॥ गोकुल मोहन सो मिलिबे को अहो मनभावति मंत्र बिचारे । काम को जीतिबे को सब जाम मनो सब धाम मे दीपक बारे ॥ १७९ ॥

सोरठा।

नाभी बांबी थान, रोमवली तजि फनिबधू ।
उरज मलैगिरि सान, चढ़त मनो सौरभ चहैं॥

फलोत्प्रेक्षा असिद्धविषया।

बारि में बूड़ि जपैं रवि को सरि पंकज पाइन की गहिबे को । बास उपास करैं बन में कटि की सम सिंघिनि यौं चहिबे को॥ गोकुल श्रीफल संकर सेइ चहै कुच की रुचि को नहिबे को। रोज अन्हात है छीरधि में ससि तो मुख की समता लहिबे को॥ १८१ ॥

सोरठा।

तो कटाच्छ अनुमानि,तुलिबे को मनमथ करै ।
अति अनियारे जानि, बान मालती मुकुल के॥

अपन्हव लच्छन दोहा।

मिलित अपन्हुति सों जहाँ उत्प्रेच्छा है सु धाम।
ताहि अपन्हव कहत हैं अलंकार अभिराम ॥

यथा।

राजति चारुन रोमावली सो मनो गिर तें

अलि सेनि चली है । है रसरूप तरंग मनो लखि गोकुल कौन कहै त्रिवली है ॥ रावरी नाभि पै ये न लसैं वलि नील निचोल की नीवी भली है । काम सरोवरनी मे मनो यह स्याम सी सोहति कौल-कली है ॥ १८४ ॥

मो मत है नर नारिन को नख तें सिख लौं सुखमा सरसायो । मौरत देखि हितू बन वृन्द लसै जस चन्द सखा छवि छायो ॥ गोकुल ए न है और के कूजे सो चेत महीप सुनो यौं सुहायो। मूरतिवन्त मनो रतिकन्त विलोकि बसन्त बिलोकन आयो ॥ १८५ ॥

कञ्चन सलोनी पिचकारिन की धार ऐन चंचला जमाति को सरूप करखत है। भोडर की चमकन जुगनू जमक जुबतीन की न कूकनी कलापी हरखत है ॥ गोकुल गुलाल उड़ै लाल भयो अंबर लौं तहां चेतसिंह को सरूप परखत है। सांवन की साँझ माझ मेघ मघवा पै मनो भागभरे भू पै अनुराग बरखत है ॥ १८६ ॥

सम्बन्धातिशयोक्ति लच्चन दोहा।

अनहोनी जो बात है होति जहाँ सो आइ ।
संबन्धातिसयोक्ति सो तहां कहैं कबिराइ॥१८७॥

अयोग्ययोग्य यथा।

बासन बास कठौती हुती औ लटी दुपटी जेहि बीतत सीवत। गोकुलछानी सरगरी भीति रहे जित चूहन के गन जीवत ॥ धाम सुदामै लह्यो हरि सों जेहि देखियै देखि दिगप्पति भीवत। बैठे जितै गन चातिक के घन तें बन चोंच चलाइ कै पीवत ॥ १८८ ॥

सोरठा।

रे पिय प्रान समान बसत हिये जानत सबै ।
खरी जरी यह मान जानि परै यातैं जुदो॥१८९॥

योग्यअयोग्य यथा।

नेरे न जाइ सकै सजनी लपटैं सो लगै बिरहागि बरे तें । गोकुल कौन सन्देसो सुनै सुनि चेत कहा मन मोह भरे तें ॥ आपन तौ लिखि देत कहा यह बाँचि है कौन है जौन

जरे तें । पाती उठै बरि ताती इती हरि प्रान पियारि के पानि परे तें ॥ १९० ॥

सोरठा ।

री पिय को सनमान है करिबो तिय को उचित।
हहा जरो यह मान जो न आदरै प्रानपति ॥

अत्यन्तातिशयोक्ति लक्षण ।

पर को पूरुब बरनियै पूरुब सो पर होय ।
अत्यन्तातिशयोक्ति सो बरनत हैं कवि लोय ॥

यथा सवैया

कछु दोस सुनाइ सरोस करी सजनी रस-बाद सबाद भरे । चख चोट कै घूंघट ओट कर्‍यौ बदले रुख त्योर तनेन करे ॥ कवि गो-कुल प्रानपियारे को हेरि हियो हरख्यो लगिबे को गरे । टरि मान गयो पहिले तिय को पिय को फिरि पाइन पानि परे ॥ १९३ ॥

सोरठा ।

पहिलेहीं हरि आइ, खरो भयो मो पैरि पै ।
पीछे तुई पठाइ, मैं दूती जानत नहीं ॥१९४॥

चपलातिशयोक्ति लक्षण।

कारन के प्रारंभहो जहँ कारज ह्वै जाय ।
तहँ चपलातिसयोक्ति सब बरनत हैं कविराय॥

यथा।

रूपभरी गुनरासि खरी करतार करी सी अरी बिलसै तू। गोकुल तो सर सी तरुनी अब लौं न लखी बलि तो सरिहै तू॥ ता मुखपङ्कज के भये भौंर रहैं हरखे हित एतौ करै तू। पीतम को मन सौति को मान सुजान सो लूटि लयो मिलतै तू॥ १९६॥

मुख पीरी परी धरकी छतियां मन तें कढ़ि ब्यौंत गये कलके। तलबेली चढ़ी तन तापन तें बढ़ि स्वासन के उमड़े हलके॥ कबि गोकुल ऐसी दुतै मैं भई यह जीवेगी क्यों बिछुरें पलके। रुख पीतम के चलिबे को चितै तिय के चख री झख से झलके॥ १९७॥

सोरठा।

पिय चलिबे को बैन सुनि चितको चुरि चाव गो।
अँसुवनि बरखत नैन लिखी लीक लौं लगि परै॥

रूपकातिशयोक्ति लक्षण।

बिषई पद सों होत जहँ विषै अर्थ को बोध।
रूपकातिसयउक्ति तहँ बरनत कवि मतिसोध॥

सवैया।

बर बारिद की पटली मधि गंग त्रिकूल सरोवरनी मैं धसै। धनुसायक फूल तिलौ को जपादल दाड़िम बीच सुधा बरसै॥ कवि गोकुल कंबु चकौ चकई अलिसैनी सिरीस कली लौं लसै। इतनेवर भार भरी कदली भर सों लखि कौलनि कैसो बसै॥ २००॥

इन्दुबधूगन पङ्कज पै कदली पर केहरि की कटि जानौ। तापर काम सरोवरनी मनि कंचन सेनि बिलोकि बखानौ॥ तापर गोकुलनाथ सिँगारलता पर है अचरज्ज महानौ। धार धरे घिरि घेरि रहे घन भूधर कंबु कलाधर मानौ॥

सोरठा।

है पंकज पै पेखि कनकलता फूली फरी।
अरि बलि तापै देखि मीन लये ससिघनगसो॥

भेदकातिशयोक्ति लच्छन।

औरै औरै बरनियै बर्न्यं व्यवस्था रूप।
भेदकातिसयउक्ति सो बरनत हैं कबि भूप॥२०३॥

यथा सवैया।

देखति हौं दिन द्वैक तें औरई ठान ठनी ठकुराइनि केरी। बैठिबे की उठिबे हँसिबे को सो औरई भाँति की बानि बयेरो॥ गोकुल बूझति हौं कहियै डरि डौरि उठी लखि रावरे केरी। औरई चाल चितौनि है औरई औरै भई बलि बोलनि तेरी॥ २०४॥

अक्रमातिशयोक्ति लच्छन।

कारन औ कारज जहां होत एकही संग।
अक्रमातिसैयोक्ति सो बरनत सुकवि सुढंग॥

यथा।

रूपभरी गुनरासि अरो बिधि ऐसी करी सिधि तोहि सुजानहिँ। तो सरसी तरुनी जग में धरनी पै कहां बरनो लखि आनहिँ॥ गोकुल गौने के बासरहीं यह ढंग हो कौन के अंग ब-

खानहिँ । एकहि संग समेटि लयो वलि पीतम को मन सौति के मानहिँ ॥ २०६ ॥

सोरठा ।

लखत सांवरो अंग वानट को अटकन लगी ।
अरि अलि लागे संग चखचित अंक कलंक को।

तुल्ययोगिता लक्षण ।

वर्न्य वर्न्य को धर्म इक कै अवर्न्य को होय ।
तुल्यजोगिता दुहुन मधि क्रिया एकही होय ॥

यथा ।

आनँद देत चकोरन कों विकसैं कुमुदो सुहरै तम तोक को । जीवन को तनताप हरै करि सींचि पियूखमई करै लोक को ॥ गोकुल रावरेही में लखि तें कहां लगि लों बरनै गुन थोक को । एरे सुधानिधि तेरे उए दुख होत बियोगिन कौलनि कोक को ॥ २०८ ॥

सोरठा ।

उयें तेजनिधि भान तपित होत सिगरो जगत।
पावत मोद महान कोक सोक तजि कोकनद॥

अवर्न्य को एक धर्म।

रूप की खानि सुजानभरी गुन गाइबे जोग बिरंचि बनाई। तो सरसी तरुनी जग में बर-नीयै बिलोकि कहा सुघराई॥ गोकुल मोहन को मन मोहन क्यौं न करै सुनियै सुखदाई। तो पग पानि चितौत लखी किसलै अस कंज की काठिनताई॥ २११॥

सोरठा।

तो कुचरुचि को देखि हानि मानि हारे हिये।
जड़ ह्वै गए बिसेखि सानुमानु अरु श्रीफलौ॥

अपर तुल्ययोगिता लच्छन।

हित में अनहित में जहां एकै कहिये धर्म।
तुल्यजोगिता अपर यह कहत सुकवि तजि भर्म॥

यथा।

तो सरसी तरुनी जग में न रची बिधनै यह जानि लई है। क्यौं न बसै बस रावरे के उन-में इतनी बलि चातुरई है॥ गोकुल रावरे के गुन रूप सराहि सके अस को नवई है। मो

कर जो पठई तुम कों यह सौतिनही को दु-
साल दई है ॥ २१४ ॥

सोरठा ।

रे तिय परम सुजान जानि हिये अति मोदभरु
दियेरहत नित मान सौतिन को अरु अपुन को
तुम सम और मही न, चेतसिंह सुनिये नृपति।
हार बास कै दीन, तुम सत्रुन कों मित्र को ॥
दानी सूर न तो सरिस, लख्यौ चेत छिनिपाल।
दीनन को अरु दुवन को, देत तुही लखि माल॥

अन्यतुल्ययोगिता लक्षण ।

लहि गुन को उतकर्ष जहँ सम करि कहिये बैन।
तुल्य जोगिता अन्य यह बरनत कवि गहि चैन॥

यथा ।

कानन लौं चरिबोई करैं अति प्यारे लगैं
कजरारे अहो हैं । जोबन के मद सों उमगे
लखि मेरे मढ़ै जन जैनत को हैं॥ गोकुल साँच
सराहिबे जोग जगै जग में जग जैनत जो हैं।
चञ्चल खञ्जन मीन मृगैन सुचैन भरे चख रावरे
सोहैं ॥ २१९ ॥

सोरठा ।

तो कुच श्रीफल सान, करी कुंभ करि हित हिये।
धरि बिधि अधिक सयान, अति कठोर उन्नत करे॥

दीपक लच्चण ।

जहां बर्न्य आबर्न्य को कहिये एकै धर्म्म ।
एक क्रिया दुहुं दिसि तहां दीपक दीपक पर्म्म ॥

यथा ।

एक घरी न थिरैं फिरतै रहैं कानन लौं भरि भूरि प्रभा तें । जोबन भार भरे असितौ सित सोहत एऊ अहो कजरा तें ॥ गोकुल दोऊ सराहिबे जोग जगै जग में जस मोद महा तें । रावरे नैन कटाच्चन तें बलि खञ्जन राजत चञ्चलता तें ॥ २२२ ॥

सोरठा ।

धारे धुरवा बारि, तो कच सरस सनेह सों ।
चकिचख रहत निहारि, सोभित होत धराधरे॥

दोहा ।

दीपक सोहै तीनि बिधि अर्थाब्रितयक मानि ।
और पदार्थाब्रत्तयक पदाब्रत्तयक जानि ॥२२४॥

अर्थ एक पद दोइ में जहां सुआवृत्त लेत ।
अर्थावृत दीपक तहां कहत सुकवि करि हेत ॥
अर्थ दोइ पद एक को आवृत्त करिये जौन ।
पदावृत्त दीपक तहां बरनत हैं कवि तौन ॥
पद औ अर्थहु को जहां आवृत्त होइ अमन्द ।
कहत पदार्थावृत्त तहँ सुकवि महा तजि दन्द ॥

पदावृत्त यथा ।

प्रेम करौ पहिलै करिकै नजरौ न मिलै यत जैयत भागे। जानि परे तुम जैसे हौ तैसे लखि चख रावरे के अनुरागे॥ गोकुलनाथ तिहारो न दोस है आपनोई कृत आवत आगे । पै गुन आपुनहूं को सुनो सिगरे जन गाँवन गाँवन लागे॥ २२८॥

अपरंच ।

ऊख गई कब की कटि कै रहरौ न बढ़ी न भयो सन रूड़ो। गोकुल नारे नदी तट के भरि भे जित पैयत आनन्द जूड़ो॥ मोहन सों मिलिहै न भये कत सोच करै चित कों निति

खूड़ो। ताप चढ़ी तिय के तन में लखि कै सिगरो बन सो बन बूड़ो॥ २२९॥

सोरठा।

गहे सुगुन गुनखानि, यह मालिनि मनमथ भरी।
भरो सुरस पहिचानि, संग सुमन सुमनो गुहै॥

अर्थावृत्त यथा।

दोस करो अपसोस हूहै तुम कैयक बेरन सौहन कीन्हो। प्रेम को नेम निबाहिबो जो सो भली बिधि सों सिधि कै निधि लीन्हो॥ हैं न छपे गुन रावरे के यह सोनै कही बकि जो उन दीन्हो। गोकुल जैसै हो तैसे चलो परसौ पग जो हित चाहत चीन्हो॥ २३१॥

दम्पति रमत रति रङ्ग मै उमङ्ग भरे तूहूं दुरी देखी बनी बानक सुजान की। जैसे घन दामिनि जुरत त्यों लला के हिये लोभ भरी लाड़िली अधर मधुपान की॥ गोकुल कहत थहरात तन भावती को ही मैं ठहराति है न माल मुकुतान की। नाहीं भरी अनक बनक

मुनु सीबी झटू घुघुरू की घनक झनक बिछु-
वान को ॥ २३२ ॥

पदार्थावृत्त यथा ।

भूपन को मान गयो ग्यान गयो बीरन को
बैरिन को प्रान गयो खलदल खरको । जनक
को सोच गयो सङ्कट सिया को पुरजन मन पन
भयो आनँद सु भर को ॥ गोकुल कहत साधु
सुखमा सरस भई भयो है असाधुन को रूप
जरो जर को । मङ्गल उदोत भयो पोत पुन्य
पानिप को दोइ खण्ड होत हीं कोदण्ड महा
हर को ॥ २३३ ॥

अपरंच ।

सब राति जगी रति रङ्ग में अंगन आलस
के गन गाजि रहे । कच छूटि छये गिरि हार
गये उर पै नख के छत छाजि रहे ॥ कवि गो-
कुल लङ्क लटी लखि लोयन लालची मोहि सो
बाजि रहे । सखि लाजि रहे चखचारु चितै
मुख पै श्रम सीकर राजि रहे ॥ २३४ ॥

सोरठा ।

चख बढ़ि लागे कान, कच बढ़ि लागे पांव सों।
चित बढ़ि लग्योस्यन, हित बढ़ि लाग्यौ स्याभसों॥

प्रति वस्तु उपमा लक्षण ।

वाक्य एक सामान को जहां कहत कवि लोय।
प्रती वस्तू उपमा तहां कहत क्रिया है दोय ॥

यथा ।

बालक बैस तें या ब्रज मै बसि रूपवतीन में दै फिरी फेरी । चातुर हौ बतियां समुझौ गुन रूप की रीझन जोग घनेरी ॥ गोकुल तो सरसी तरुनी न लखी अबलों ठकुराइनि मेरी। राजै सुधा सो सुधानिधि यों मुसुकानि सों सोहत तो मुख एरी ॥ २३७ ॥

सोरठा ।

लसत तेज तें भान, दिनमनि बारिज बंधु वर।
धरे सुधा सुखदान, सोहत ससि बसकरि कुमुद॥

दृष्टान्त लक्षण ।

जहां बिम्बप्रतिबिम्ब सो बरनन करियै आनि ।
अलङ्कार दृष्टान्त तहँ कविजन कहत बखानि ॥

यथा ।

ठाकुर हौ तिहुंलोकन के अरु मैंहूं भिखारिन को अधिपैहौं । आपुन हौ नवनिद्धि धनी रचि मैं रस सो वसु व्रन्द लखैहौं ॥ रावरे के जस को चसको सुनौ गोकुल हौं कवि कीरति गैहौं । श्रीदशरत्थ को रामलला तुम दाता बड़े बड़ो भिक्षुक मै हौं ॥ २४० ॥

सोरठा ।

तोमुख छबि की खानि भरो जोति जगमग करै ।
यहो कलानिधि जानि सुधासिंधु छीरधितनै ॥

अपरञ्च ।

गाइवे जोग जगै जग माह घनी इतनी सुकुमारतई है । चाहतहौं रहिये इनको जू इती चख नें चलि चाह छई है ॥ गोकुल जो विधि ऐसे रचै तव तौ धरनी पर धन्य हई है । चारु सुवास सनो सरसीरुह रावरे को मुख रूप मई है ॥ २४२ ॥

निदर्शना लक्षण ।

वाक्य जो ताके अर्थ को सदृस एक आरोप ।
तहां कहत नीदर्सना सुकवि कहे चित चोप ॥

यथा ।

मोहन मंत्र जो तंत्र वसीकर जोति जगै टटका के दिया की। टोने की टामन की बिरती मनि जौन मनोभव से करिया की ॥ गोकुल ठौर ठगौरी की बौरई काम कला चित चोर पिया की । औरन जानि हिया में अहै यह जो सब सो मुसुकानि तिया की ॥ २४४ ॥

लेप मनोघनसार को अंगन लाइ दे धार गुलाब जलै की। छाइ उसीर न्हवाइ पियूष सों आगि बुझाइ दै अंग अलै की ॥ गोकुल पाइ परों चलि बेगि दसा कहि जात न है बिकलै की। औधि सुनाइ दे लाल की ऐबे की प्याइ देवालहि बाय मलै की ॥ २४५ ॥

सोरठा ।

ऊख मह्रख पियूष, इनको जौन मिठास है ।
सो जानति पिय भूख, तौ अधरन की मधुरता॥

अन्यनिदर्शना लक्षण ।

जहां सु चारु पदार्थ की एक ब्रत्ति है स्वच्छ ।
तहां सु अन्यनिदर्संना बरनत हैं मति दच्छ ॥

यथा।

वारन भौंर के हारन की रुचि खञ्जन की चख चाहि हरे हैं। आनन चारु सुधानिधि की कुच कोकन की सुचि श्राप अरे हैं॥ गोकुल रोमवली लतिका अवलोकि उरू कदली निदरे हैं। पङ्कज की सुकुमारतई तुव प्रानप्रिया पग पानि धरे हैं॥ २४८॥

सोरठा।

बलि तो आनन चन्द, जीते उरजन गिरिवरो।
तो पगपानि अमन्द, देत हरेये सरसिजहि॥

अपर निदर्शना लक्षण।

अर्थ असद सद को जहां होत क्रिया सों बोध।
तहां सुअपरनिदर्सना सुकवि कहत मति सोध॥

सद अर्थ बोध यथा।

अति जोबन भार भरे उभरे सुधरे सुखमा सुख मैं लहिये। घन पीन प्रवीन अडोल अलौ जिनकी थिति की मिति को चहिये॥ मधि गोकुल हार बिहारन देत उरोज अहो यह सो

कहिबे। हित नीति जनावत मीतन सों बिन अन्तरही मिलि कै रहिये ॥ २५१ ॥

सोरठा।

धरि कुच भर कृस लङ्क, यहै जनावति जगत को।
धीर धरे तें रङ्क, लखौ उठावत गुर भरौ॥२५२॥

असद अर्थ।

अति ढीली करी गतिया इनकी चख में लखि चञ्चलता सिलई। कटि छीन करी करि पीन नितम्ब उरोजन की लघुता बिलई॥ कवि गोकुल खीनहि पीन करे अँग पीनहि खीनता जोहि लई। तरुनापन जो दिन द्वैक बढ़े तिन को सिखवै यह आसि लई॥ २५३ ॥

सोरठा।

कच घुघुरारे जोय, यहै जनावत दुरजनहिं।
नितह्न बन्धन होइ, तऊन तजिये कुटिलता॥

व्यतिरेक लक्षण

उपमा तें उपमेय में अधिक कही गुन जोय।
व्यतिरेकालङ्कार लखि प्रीति घनेरी होय॥२५५॥

यथा ।

हैं परसि बर चारु दृगञ्चल रञ्जत सी सुखमा कजराई । नेकु नहीं थिर हैं फिरते रहैं कानन को परसैं सुखदाई ॥ गोकुल खञ्जन तें इन तें इतनी ये लखी हरि अन्तरताई । बेधत हैं लखते हियरो तिय के चख में इतनी अधिकाई ॥

सोरठा ।

तो रोमावलि रूप, अरी पन्नगी को धरे ।
है गुन भरी अनूप, डसति डीठि नीठिहु परे ॥

अपरञ्च ।

आतप प्रताप बसुधा में भरें करें सुखी हितू सरसिज जे बढ़े हैं प्रेम तोय में । जारैं अघतम मारै बैरी हिमबर जोर चारै बेद पथ निति गयें एहि खोय में ॥ गोकुल कहत भारे गुनन सँवारे बिधि परम प्रभा में पूरे पुन्य के समोय में । कैसे मारतण्ड सकै कहैं बरिवण्ड जाकै सहसौ कारन की सकति कर दोय में ॥

सहोक्ति लक्षण।

सङ्ग भाव जहँ कहत हैं मनरञ्जन कवि लोग।
तहँ सहोक्ति बरनत चतुर हरिहर कैसो जोग॥

यथा।

भरी रूपरास धरे परिमल पास तू है क्यों न करै कमल कलानिधि सों कसरो। भौंरन चकोरन सों मोरन सों एवी कहूं पावतीही बगर डगर लों अवसरो॥ गोकुल गईही आज कातिकी को न्हान नीर सबहीं न सूंघि कह्यो मालती सों ससरो। सहज सुवास तेरे अंगनि को एरी बीर कोसन लों गयो साथ कालिन्दी के पसरो॥ २६०॥

सोरठा।

चलि दुरि तुरत अवास, छोड़ि कुञ्ज फूले बिपिनि।
तो संग सुतन सुवास, भौंर भीर आवत चली॥

बिनोक्ति लक्षण।

कछू वस्तु बिन बरनिये बर्नीय जहँ हीन।
अलङ्कार सुविनोक्ति सो बरनत सुकवि प्रवीन॥

यथा ।

रातिजगी पिय के संग में थिर ह्वै सी रही मनो नीर सों न्हाये । रङ्ग पगी उमगी सुख सों झपकी पलकैं सुखमा सरसाये ॥ गोकुल हौं बलि जाति विलोकि गई बलि यों कहिये सिर नाये । खञ्जन सी न रहीं अँखियां मनरञ्जन अञ्जन के बहि आये ॥ २६३ ॥

सोरठा ।

मन्द मधुर सुर लीन, अरी बाँसुरी तू बजै ।
सतसङ्गति बिन हीन, भई लगी मुख गोप के ॥

तृतीय विनोक्ति लक्षण

बर्ननीय बरनत जहां कछू वस्तु बिन रम्य ।
दूजो कहैं विनोक्ति सब अलङ्कार बुधि गम्य ॥

यथा ।

नैहर में पिय कैं मिलिबे को उतारि गई सकुचानि घिरे तें । गोकुलनाथ दयी हठि जावक सो पसस्यो श्रम खेद तिरे तें ॥ भोरहिं आइ लख्यो सजनीन कियो परिहास अनन्द

थिरे तें । कैसी लसैं अरुनै अंगुरी बलि रावरे की बिछुवानि गिरे तें ॥ २६६ ॥

सोरठा ।

बिनु कठोरता अम्ब, लसत रावरे के चरन ।
सब जग के अवलम्ब, बसत साधुजन के हिये ॥

समासोक्ति लक्षण ।

प्रस्तुत सों अस्फुर्ति जहँ अप्रस्तुत की होति ।
समासोक्ति ज्यों दीप तें मिलत दीप की जोति ॥

यथा ।

जीवन के दानि हो सुजान हो सरस अति जगत के जीवन को आनँद उमाहे हो । सुजस को पाओ परस्वारथ को धाओ धरा तपनि मि· टाइबे को मत अवगाहे हो ॥ गोकुल कहत इन्हें आस रावरे की है जू प्यास इनकी न मेटि देत कहौ काहे हो । गरजि घुमरि घनश्याम क्यों बरावत हौ कछू चातकीनहू को अपराध चाहे हौ ॥ २६८ ॥

सोरठा ।

खतानवल तनु अंग, जाति जरी जीवन बिना।
कहासिख्यौयहढङ्ग, तरुनअरुननिरदैनिरखि ॥

परिकर लक्षण ।

अभिप्राय जहँ क्रिया को सुविसेखन में होत ।
अलङ्कार परिकर तहां वरनत हैं कवि गोत ॥

यथा ।

करवाल रहैं धार ढरकति आँसुन की हरकत लाज तन तपनि पसारे हैं। पल न परन देत कल कल पावत हैं जानै न जतन जन जी में निरधारे हैं ॥ ह्वै को निरदै री उन्हैं ऐसे न चितै री बीर गोकुल के नाथ वे तौ रावरे पियारे हैं । ईछन में गड़ैं क्यौं न री छन बिलोकतही तीछन कटाच्छ बरे ईछन तिहारे हैं ॥

अपरञ्च ।

आवतही जमुना तट तें हरि तोहि मिलौ ठकुराइनि मेरी । ता छिन तें करसायल लौं घुमरै न परै पल को कल एरी ॥ गोकुलनाथ

सुरस्मुर साधि रच्यौ यहि मैं बसि मैन अहेरी।
घायल क्यौं न करै करि हायल पाइ परौं बलि
पायल तेरी ॥ २७३ ॥

सोरठा।

क्यौंन लङ्क लचि जाइ, पीन पयोधर भर भरी।
यातें कहियत हाइ, ऐसे रुचियन औचका॥२७४॥

परिकरांकुर लच्चण।

अभिप्राय जहँ क्रिया को है विशेष्य पद बीच।
परिकरअंकुर कहत तहँ जे हैं सुकवि निभीच॥

यथा।

रूसनहारी लखी कितनी पर या बिधि सों
तन काहू न तायो। पानि औ पान बिसारि हहा
तुम ऐसी भई सब द्यौस गवायो॥ गोकुलताप
हरै गो लखि अबहूं तौ चहौ पग बाहिरे नायो।
पाय परौं गिरो बीर बलाय ल्यौं बाम सुधाधर
धाम पै आयो॥ २७६ ॥

सोरठा।

क्यौं न मधुब्रत होइ अविबेकी या जगत में।
निसिकमलनमेंसोइ फिरत आक ढाकन लखो॥

श्लेष लक्षन ।

अलंकार अश्लेष तहँ बरनत हैं सुखधाम ।
जहां अर्थ है तीनि को संग होत अभिराम ॥
बर्न्यबर्न्य को श्लेष यक औ अवर्न्य को एक ।
बर्न्य अबर्न्यहु को कहत कविजनसहितबिबेक॥

बर्न्यश्लेष—यथा ।

ढरै मधु माधुरी पराग सुबरन सनी सरस सलोनी पाय तापन के अन्त की । कामना जुगति की उकुति सरसावत सी थावै मधुराई कलकोकिल के भन्त की ॥ गोकुल कहत भरी गुनन गँभीर सीरी कानन लों आवति पियूख ऐसे बन्त की । ऐसी सुखदानी हौ न जानी जगती में और कविन की बानी वर बैहर बसन्त की ॥ २८० ॥

सोरठा ।

तो तन सुख को रंग चटक भरो नीको लगै ।
गहिरो गहै उमंग लग्यो लाल सोधि पग्यो ॥

अबर्न्यश्लेष—यथा ।

आजु कौन तोसी बारबधू भूमि मण्डल

में भाग सो भरी है गुन रूप जुगतन की। बिधि
की गढ़ी है तू पढ़ी है प्रेम नेम करि काम मंत्र
तंत्र की रिचा सो सुकतन की ॥ गोकुल बि-
लोकि बार बार बलि जाति बलि ऐसी कथा
भाल में लिखी है मुकतन की। रावरे की मांग
को निहारि आंग एजू सुनो वारि वारिजाति
जी में माल मुकतन की ॥ २८२ ॥

सोरठा।

री कुच तेरे वाल भरे अपूरब पुन्य सों।
लखि मुकुतन की माल धन्य होन चाहत भजै॥

वर्न्यावर्न्यश्लेष यथा।

फूल सों भरी है हरी हेरत हियो हरति
घनी सुख सनी सपनी है रति कान्त की। सरस
सुबासरली अलि अवलीन मिली भिरती बनी
सी वर बसीकर मन्त्र की ॥ गोकुल बिचित्र अंग
रंगन सों रई राजै नई सुखमा सी भूरि भूतल
अनन्त की। आपुन बिहारी हौ बिहार करि
देखौ बनी बोस बिसे प्यारी फुलवारी है बसन्त
की ॥ २८४ ॥

सोरठा।

तो चख लखिलो बाम सपरसितों मुख लाज ते
अति आतुर तन स्याम करे दुरे अरबिन्द मे ॥

अप्रस्तुतप्रसंसा लच्छन।

अप्रस्तुत सो होति है जहँ प्रस्तुत को ऊह।
अप्रस्तुत परसंस कह ताको सुकवि समूह॥२८६॥

यथा।

नेकु छुटै जुटै दौरि कै तौन अगौति वियोग को एक सला है। मोद भरी घनस्याम के ही में बसै सब जाम भई अचला है॥ गोकुलनाथ सराहिवे जोग करे यहि को प्रन प्रेम भला है जानि परै जगती तल बीच संजोगिनि एक अरी चपला है॥

अपरंच।

तोहि बिना जल रासिन तें दद्दुरागन मोरन को सुख पावै। थावर जंगम जो जग में सब फूलै फरै मुद मंगल गावै॥ गोकुल तोहि जप्यो इतनै दिन मौसर औसर तू न गँवावै।

बारिद एतो बिबेक बिचारिबो चातिक तोहिँ अकेलोई ध्यावै ॥ २८८ ॥

सोरठा।

यह जग धन्य चकोर, सकल द्यौस आनँद तजै।
ससि लखि लखै न और, घनउड़गनग्रहगनउचै॥

प्रस्तुतांकुर लक्षण।

प्रस्तुत तें द्योतन जहाँ प्रस्तुतही को होत ।
प्रस्तुतअंकुर कहत तहँ अलंकार कबिगोत ॥

यथा।

सारस सरस हंस बंसन सों सोहति है पानिप के पूर पेखि परसि सुधासे तू । लहरनि लेति छहरनि सुखमा की क्यौं न बारिजन हेरि हियो हरषि हुलासि तू ॥ गोकुल कहत ऐसो गहत अयान एरे एतिक सयान मानि ज्ञानगन नासि तू। परम पुनीत ऐसी छोड़ि सरिता को सोधै स्वलप सरोवरनि पथिक पियासे तू॥२९१॥

सोरठा।

अलि कदंबतरु पाइ, सुमनभरो मकरंदमै ।
तजि करील पै जाइ, निरस अपत परसे कहा॥

पर्यायोक्ति लक्षण।

जहां कहे पर जाय कै बोध अर्थ निज होत ।
परयायोक्ति तहाँ कहैं अलंकार कविगोत ॥

यथा।

ताड़का सँघारि मारि सबल सुबाहु-सैन जग्य करवायो रिखिराय जू सो नेत में। तारी ऋषिनारी व्याही जनककुमारी भारी तोरि कै पिनाक धाक बीरन के चेत में ॥ गोकुल तू ताहि भज खलमर खंडन कै बलि बांधि राखि मम सुगरीव हित में। बांधि सेत समुद में सीस दस सीस भुजा रावन के काटे जिन सोहैं रन-खेत में ॥ २९४ ॥

सोरठा।

करीकुंभ गिरिसानु जिन जीते श्रीफल कठिन।
ते नर निपट अजान तिन्हैं छोड़ि औरहि भजैं ॥

द्वितीय पर्याय लक्षण।

छल बल करि कै होत है जहाँ सुसाधन इष्ट ।
परजायोक्ति इहौ कहत जे हैं मति-उपविष्ट ॥

यथा।

घाट घनो जमुनातट को नरनारिन की जित भीर मभैयै। गोकुल हार बड़े गथ को मुकुतान को ऐसे अहो बिसरैयै॥ पायो है मै केहि ते पठओ सो बिना जन जानि तजौ दुचितैये। लीजिये जू पहिरौ अभिराम हौ काम बने चलि धाम में ऐये॥ २९७॥

सोरठा।

अहो पथिक भइसांझ, तटसूनो निरजन सघन।
डरि सरिहौं पथमांझ, रहिघट भरि होंहू चलौं॥

व्याजोक्ति लक्षण।

निन्दा ते अस्तुति जहाँ निकसति सुनो निमीच।
अलंकार व्याजोक्ति जहँ निन्दा अस्तुति बीच॥

यथा।

देवन को दुज दीनन को जिन पाय पयोधि को पूर पसारौ। बालक वैसहि तें बल कै जिन सज्जनपीड़न को प्रण धारौ॥ गोकुल जंग जुरे तुरतै जिन दैतन के गन को वन जारौ।

देत तिन्हैं सुर के पुर को यह कौन सो काम है राम तिहारौ ॥ ३०० ॥

सोरठा ।

गर गरधर सिरमाल रचि अरचत जेतो सलिल ।
सरस सुमन को माल तिनै देति तू सुरसरित ॥

स्तुति व्याज निंदा यथा ।

कहत हौ सांची तुम सांची हौ हूं जानति हौं बतियां तिहारी सब सांची अनुमानो मैं । कबहूं करौगे अपराध साधु साहिब हौ साधुन की संगति की इंगित सो मानौ मैं ॥ गोकुल के नाथ आए भोरही सनाथ करी रावरे को गुनगन कीन्हों भलेगानो मैं ॥ इतनी भलाई क्यों न चाहत चलाई तुम भैया हलधर के हौ दैया तुम्हे जानो मैं ॥ ३०२ ॥

सोरठा ।

क्यौं न सिरावै हीय अहो पीय पावन परम ।
सकलकलाकमनीय भले परे ससि से परखि ॥

निंदा व्याज निन्दा लच्छन यथा।

कारो तन, कारो मुख, कुटिल कठोर कूर क्यौं न करि देत बिधि ऐसे महापापी को। छूवत न कोऊ नेकु बैठन न देत नीरे काठ लौं कठोर घोर आखर अलापी को॥ गोकुल कहत वाहि वैसेही जगत निन्दै करिबे न जोग इतनो हो मदिरापी को। पतित कहावै क्यौं न पच्छी में काग जो पै पालत है तोसो पिक अपत उतापी को॥ ३०४॥

सोरठा।

हर को अरि बिन अंग काम सत्रु बिरहीन को।
करि दोषाकर संग तोसौं अति निंदित भयो॥

आच्छेप लच्छण।

आपु कहै कहिकै करै आपु निषेध बिचार।
आच्छेपालंकार सो बरनत कबि निरधार॥३०६॥

यथा।

आवत हैं इत दोसभरे इनकै सब औगुन तू कहिओरे। बैठिऔ दूरिही ऐठिऔ भौंहनि

मान कै मौन महा गहिऐ रे ॥ गोकुल पाइन पारिऐ हेरि कै फेरि कह्यौ न इतो नहिये रे। जैसौ करै पिय तैसो करै मन नीको रहैऽब इतो चहिऐ रे ॥ ३०७ ॥

सोरठा।

हे मन पिय सों मान, आजु औसि करियै सुनौ।
समुझि कहै जो प्रान, तासों कबहुं न रूसिये॥

निषेधाभास लच्छन।

पहिले करै निषेध को, फिरि ठहरावै ताहि ।
कहत निषेधाभास हैं कबि आक्षेपहि ताहि ॥

यथा।

चाहियै जो अब सो कहिये लखि कै सिगरे बलि औगुन मेरे। तोसर सी ठकुराइनि छोड़ि कहौ किन कौन के लागिहौं नेरे ॥ गोकुल पाइनि पानि धरें मनमोहन जू यों कहै हित हेरे। मोहिँ न जानि तू प्रानप्रिया अरी प्रानपिया हम चेरे हैं तेरे ॥ ३१० ॥

सोरठा ।

मो तन जोबन है न, पाप पाछिले जन्म को ।
पाइ न रखियत नैन, तऊ सैन सौ बिधि चलै॥

व्यक्त आक्षेप लच्छन ।

प्रगट जहाँ बिधि देखिये है मूढो आक्षेप ।
व्यक्ताक्षेप कहैं सुकबि अलंकार रसलेप ॥

यथा ।

कूकनि मोर पपीहन की सुनि देखति हौं जू कदम्ब के मौरन । दौरत हौं दुदुरान मिलो इन झिल्लिन की झनकार के डौरन ॥ गोकुल कीजे गनेस महा प्रभु आपुन सौं कहिये कछु औरन । लिखन बैसन भावती की बलो पेखत हौं धुरवान की दौरन ॥ ३१३ ॥

सोरठा ।

करिय मान सुखनेत, हौं न आजु बरजति तुम्हैं।
लिय बियोगि बिधिहेत, सुनी सूर सौं ससि कलौं॥

बिरोधाभास लच्छन ।

अर्थ मुख्य सो अर्थ जहँ भासित होइ बिरोध ।
तहां बिरोधाभास है जमक शब्द में बोध ॥

यथा ।

चैन चितौनि भली चरचा सँग जौ लगिहै सँग जौ लगि है ना । अंक कलंक को बंक कछू तनकौ लगिहै तनकौ लगि है ना ॥ गोकुल वा ठग सों ठगहारी गुनौ लगिहै सो गुनौ लगिहै ना । मोहन गोहन सो सजनी चख तौ लगिहै चख तौ लगिहै ना ॥ २१६ ॥

सोरठा ।

लहि तो परम सोहाग,भईं सोहाग बिना सबै ।
लखि सौतिन को भाग, बिना मानहू माननी॥

विभावना लच्छन ।

कारन बिनु जहँ होत है कारज कौनौ सिद्धि ।
अलंकार सु विभावना तहां कहत बुधिनिद्धि ॥

यथा ।

देखती जौ तब तौ कहती कछु रावरेही की हितू हम तौ हैं । चाहति रावरे के मुख की चखकोर कृपाभरी रावरी जोहैं ॥ गोकुलनाथ से प्रानपियारे पै ते हैं अयानभरी जे

वे को है। कौन सो नाध्यौ है नाथ लली अप-
राध बिना बलि तानति भौहैं ॥ ३१९ ॥

सोरठा।

बिन कजराहू नैन, कजरारे लखियै लखौ ।
सौंधो सुतन छुवै न, उठति सौंधाई की लहरि॥

हेतुविभावना लच्चन।

कारज जहँ असमर्थ है करै सो काज बलिष्ट ।
तासों हेत विभावना कहत सुकबि मतइष्ट ॥

यथा।

दसहूं दिसान के दिगीस ईस अवनी के
परसि लजाइगे चढ़ाइ भुजभर जो । गोकुल
कहत जौन रंचक उठाइ सकै ऐसो तीन
लोकन में दानव अमर को ॥ जनक को सोच
जानकी को परताप देखि दयासिंधु मया करी
कैसी हरबर हो। देखो रामराय जू को कारज
कठोर तोयो पंकज से पानि सों पिनाक धरा-
धर सो ॥ ३२२ ॥

सोरठा ।

गिरि से उरज उतंग, भरे भार लागत लखौ ।
होति न कैसेहु भंग, दरभअना सी कटि धरे ॥

तृतीय बिभावना लक्षण ।

प्रतिबंधक तहँ काज को कारन कहिये आनि ।
तिसरी होति बिभावना कबिजन कहैं बखानि॥

यथा ।

रूपभरी तरुनी तिनको लखि तैसो बसै चित सोभित कीन्हो । गोकुल मैर मनोभव को नख तें सिख लों छरि कै भरि दीन्हो ॥ रावरे को गुन एजू बलाइ ल्यौं पाइ परों कछु जाय न चीन्हो । मोहन के मन को सजनी तुम मोहन से ठग को ठगि लीन्हो ॥ ३२५ ॥

सोरठा ।

कबहुंनछोड़तिरीति, निपटसुनीतिसुलाजबस ।
जासों हरि बिपिरीति, करवाई कहिये कहा ॥

चतुर्थ बिभावना लक्षन ।

जाको कारन जो नहीं तातें उपजत तौन ।
कार्ज जाति को कार्यता को है कारन भौन ॥

यथा।

चम्पक की लतिका तें सुबास सुमालती को पसरै सुखदैन री। कौल के कोस तें गन्ध गुलाब को आवत है लहि दायक चैन री॥ गोकुलनाथ कुहू निसि में यह राका के राति को दाहऽब है न री। देखि कपोत के कंठ ते आली कढ़ै कलकोकिल को बरबैन री॥ ३२८॥

सोरठा।

सखि अचरज्ज नवीन,जपा कंज कुसुमति भरो॥
दोइ सिरीफल पीन, फरी पेखि चम्पकलता॥

पञ्चम बिभावना लच्छन।

जहाँ बिरोधी कार्ज को कारन कहिये देखि।
उपजत कारज है तहाँ पचयों भेद सुलेखि॥

यथा।

तू ठकुराइनि है ब्रज की ब्रजठाकुर हैं हरि क्यौं न तकै तू। काहू चवाइन सों सुनि कै भ्रमभूलिभरी सो कहा उझकै तू॥ गोकुल जोग न रावरे कै इन सों इतनी रिसि कै उ-

मकै तू। आनन ऐन सुधा को हहा तिहि तें इतनो विष बैन बकै तू॥ ३३१॥

सोरठा।

तोही में गुन बाम, अरी बाम लखि परत है। बढ़त भयंकर काम, तो कुच संकर सेवतै॥३३२॥

छठईं बिभावना लच्छन।

कारज सो जहँ होत है कारन की उतपत्ति। अलङ्कार सु बिभावना छठईं कहियत सत्ति॥

यथा।

आवतहीं जमुनातट तें सँग न्हाइ सखीन के राधिका रानी। गोकुलनाथ मिल्यौ मग में सो कहा करिगो कछु जात न जानी॥ हाय उपाय न जाय कियो ब्रज बूड़त है बिनु पावस पानी। धारन में असुवान की है चख-मीनन तें सरिता सरसानी॥ ३३४॥

सोरठा।

तो मुखचन्द अमन्द, स्मिति छीरधि तातें कढ़त। ह्वै चकोर नँदनन्द, हंस होत आनँदभरो॥

बिशेषोक्ति लच्छन।

लहियत कारन बहुत जहँ कारजसिद्धि न होय।
बिशेषोक्तिऽलङ्कार सो तहँ कहियत है जोय ॥

यथा।

होस बिनाही सरोस करी इन धूतिन दोस सुनाइ पिया को। गोकुल कैसी भरी रस में रिसि वोइहै यों बिस बैर बिया को ॥ चैत को चन्द सुगन्ध समीर मिल्यौ सुर कोकिल काकलिया को। हारी मनाइ तऊ सजनी न गयो रजनी भरि मान तिया को ॥ ३३७ ॥

आवतही जमुनातट तें नटनागर डीठ पर्यो अबलै की। ता छिन तें थहरानि थकी सी रही जकि कै भरी काम कलै की ॥ गोकुल कैसिउँ ताप की ताप सों एरी मिटै मन मध्य अलै की। लाइ घनो घनसार सखी छिन प्याइ दै बालहि बाइ मलै की ॥ ३३८ ॥

असम्भव लच्छन।

जहाँ असंभव अर्थ की घटना करिये आनि।
थाई अद्भुत रस तहाँ आसंभव पहिचानि॥३३९॥

यथा ।

दीन्हों देखाई अचानकहीं यह मानिनि मै चित चेत हरैगी । थोरिही बैस में ऐसी इहा तरुनापन तामे कहा धौं करैगी ॥ गोकुलनाथहि नेकु लखें बिनु हाय कहौ काल कैसे परैगी । जानतही न इतो सजनी यह छोटी सी छोहरी छैल छरैगी ॥ ३४० ॥

सोरठा ।

कमलनाल सी बाल, गोरी थोरे दिनन की ।
उर धरि गिरवरलाल, बड़बोली बोलै बयन ॥

असंगति लच्छन ।

कारन कहुँ कारज कहूं देस काल को बीच ।
कहत असंगति चख लगे बढ़तबिरह हिय बीच ॥

यथा ।

दानव दुज्जन के निकटौ बसिबो न भलो यह मंत्र अराधौ । संगति दोस परोस लहौ दुख पावत पापिन के सँग साधौ ॥ गोकुलनाथ तिहूंपुर के यह राम को काम बिचारि के काधौ ।

सीयह लै दसकंध गयो है विरोध बिनाहीं स-
मुद्दर बांधो ॥ ३४३ ॥

सोरठा।

लहत उरोजन ओज, गहत गरब मन पीय को।
तो उर बाढ़त बोझ, दबत जात हिय सौति के॥

द्वितीय असंगति लच्छन।

और ठौर चाहत कियो कियो औरही देस ।
कहत असंगति दूसरी जे हैं सुकबि सुबेस॥३४५॥

यथा।

कौल से कोमल हैं इन पै इतनी निरदै-
पनता न बिचारो। पीन कठोर हैं श्रीफल से
इन पै मन आवत सो निरधारो॥ गोकुलनाथ
खिलार खरे यह तो न भलो बलि खेल तिहारो।
गेंद उठाइ उरोजन पै हरि जू ललना के कपोल
न मारो॥ ३४६ ॥

तृतीय असंगति लच्छन।

काज कियो चाहत प्रथम ताको कियो बिरुद्ध।
कहति असंगति तीसरी अलंकार मतिसुद्ध ॥

यथा ।

बकत बकत एरी देति क्यों वृथाही प्रान बिना प्रानप्यारे कौन पल कल देत है । गोकुल कहत एक बात मों सो सुनि लीजै आनद को खेत जातें उपजत चेतु है ॥ बिरह तपैहै फेर पै है सियरैहै पेखि पीतम के पाइ पाइबे को यह हेतु हैं । पोखिबे को चाहत है नीर सों जगत तब सूरज सलिल पहिलेही सोखि लेतु है ॥ ३४८ ॥

सोरठा ।

कुटिल करी बिधि भौंह, पिय परसोहैं करन कों ।
अरि अलि तेरो सोंह, हांहीं ज्यौं नाहीं सुरत ॥

बिषम लच्छन ।

घटना नहि समरूप की कीजे जहां निहारि ।
डारि मध्य किम सब्द द्वै बरनो बिषम बिचारि ॥

यथा ।

उनकी सखी हौ तुम क्यौं न ऐसी कहौ एजू कछू हम रावरी जबान धरियतु है । सा-मुहें लै ऐहो तब आपुही लजैहौ सुनो राका सोहैं

कुहू कहौ कहा डरियतु हैं॥ महरम हीय वृष-
भाननंदिनी के सरि गोकुल को ग्वाल कहो
कैसे भरियतु है। कुंदन की माल ऐसी कहां
राधिका जू कहां कारो कान्ह कैसे कै समान
करियतु है॥ ३५१॥

सोरठा।

सुनि गुनि दीजै पीठि, नीठि नीठि दूततें चलो।
कहँ या नटकी दीठि, कहँ तनुतन बलिरावरो॥

द्वितीय विषम लक्षण।

कारन औरै रूप को कारज औरै रूप ॥
विषम अलंकृत दूसरो वरनत हैं कवि भूप ॥

यथा।

गोकुल कहत हौं गयो हो सुरसरि तीर
जहां मै निहास्यो गुन अजब विहारे को। चारि
धरैं हाथ बीर बांकुरै विहंग जात सांपन पै सोय
यों सुभाव बूढ़े बारे को॥ चंदन की खौरि करै
कुंकुम को डौर धरै बसन सपेद रूप हरद पखारे
को। सुधा सी तरंग को उमंग परसत देख्यो
कुंदन से अंग भरे रंग घनकारे को॥ ४५४॥

सोरठा।

सखि तो मनकी बात, हौं समुझी व्रजकी बसी।
ताको तन पियरात, जाको तन कारो लगै ॥

तृतीय बिषम लक्षण।

उद्दिम करतें इष्ट को होत अनिष्ट जु आय ।
बिषम अलंकृत तीसरो बरनत हैं कबिराय ॥

यथा।

रूपगुमानभरी अबलौं सबही की टमा सुनती उठ कोहि री। चोरिबे को चित से बित को चलि आईही पौरि पै आवत जोहिरी ॥ गोकुल होत लखालखी पौरही ह्वै गयो चेटक सो चख पोहिरी। मै मनमोहन को कहां मोह्यो गयो मनमोहनहीं मन मोहि री ॥ ३५७ ॥

सोरठा

सुख हित कीन्हो नेह, छैल छबीले लाल सों ।
पुरजन बाढ़े तेह, भटकि गयो नट अनतहीं ॥

चतुर्थ बिषम लच्छन।

होइ अनिष्ट न समुझि यह कियो इष्ट व्यापार।
प्रापति भयो अनिष्ट तहँ चौथो बिषम बिचार ॥

यथा ।

घैर बढ़ै ब्रज में अति वैर लखै सुनतै रति तै मति मोड़ी । आइ गयो जमुनातट तें नट सो बनि गोकुल गावत टोड़ी ॥ नीठि दई हरि पै डरि पीठि कै अंचल ओट द्रिगंचल ओड़ी । दौरि मिली बरजी न रही यह ईठ कहा कहौं डीठि निगोड़ी ॥ ३६० ॥

सोरठा ।

जातें लगै न डीठि, यातें चख चावड़ दयो ।
सखि दीन्हे हूं पीठि, डीठि लगी सबगांव की ॥

पञ्चम विषम लक्षन ।

उद्दिम करते इष्ट को भयो इष्ट सो सिद्धि ।
बहुरि अनिष्ट भए विषम है पचओं बुधिनिद्धि ॥

यथा ।

पौरि पै ठाढ़ी हुती अलि आजु त्यौं आइ गए हरि आनददानी । देखतही नखं ते सिख लौं सुख सो सरसी अखियां सियरानी ॥ गोकुल बोलि नजीक उन्हैं हिय सों लगि जैवे को ज्यौं

ललचानी । हाय धौं आइ गई कितते इतने में कहा कहौं धाइ धघानी ॥ २६३ ॥

सोरठा ।

बोलि लयो हरिधाम, कामकलानिधि सों कह्यौ ।
त्यौं आई वह बाम, घरहाई बैरिनि बरी ॥२६४॥

षष्टम विषम लक्षण ।

करत बुरौ जहँ और को अपनोई ह्वै जाय ।
बिषम अलंकृत षष्टओं बरनत हैं कविराय ॥

यथा ।

डारि ब्रम्हफांसि फांसि ल्यायो दसकंधर पै मेघनाद खेत मे ते देत दीह डंका को । बसन लपेटि बोरि तेल सों लगाइ आगि कौतुक बिलोकिबे को बाढ़े छोड़ि संका को ॥ गोकुल कहत गयो तरकि कँगूरन पै सुमिरि हिए में राम राय रन बंका को । जारिबे को चाहत लंगूर जातुधान देखो बीर हनूमान जू जराय दई लंका को ॥ २६६ ॥

अपरंच ।

टूटत पिनाक धाक धावत धरा पै नेकु धी-

रज धरे न रहै दौरे आतुराई सों। बेर बेर करमे कुठार को सुढार करैं झलकत बार बार मति रिस छाई सों ॥ गोकुल कहत धाम धनुष कै साथ लयो हाथ कै छुवत राम सहज सुधाई सों। जीतिबे को आए भ्रिगनंद रघुनंदन को जीते गये आपु भये रीते बीरताई सों ॥ ३६७ ॥

सोरठा ।

मैं चख मन चित लाइ, वाको पति हरिवे चह्यौ ।
मेरोई मन हाइ, जात रह्यो मों हाथ सों ॥३६८॥

सम लच्छन ।

बस्तु दोइ सम करत है बरनन जहँ कबिराय ।
अलंकार सम कहत हैं ग्रंथन को मत पाय ॥

यथा ।

मानुष देव अदेवन में इनकी सरि को नर और न कीन्हों । हेरि तिहूंपुर में तिय में इनके सम रूप न मै लखि लीन्हों ॥ गोकुल धन्य धरा दरसी परसे इनके सरसी सुख चीन्हों । जोग कह्यौ इतनौ बिधि नै सम जानकी को बर राम सो दीन्हों ॥ ३७०॥

सोरठा।

जेहिबिधिरच्योगुपाल, तेहिठकुराइनिराधिका।
लखिरखहोतनिहाल, समसरिजुगलकिसोरकी॥

द्वितीयसम लक्षण।

कारन के सम बरनियै कारज को जेहि ठौर।
देखि सद्दस गुन रूप तहँ बरनत हैं सम और॥

यथा।

गरजत घन तरजति बिज्जु बार बार कूकत हैं मोर पिक पपिहा गरेरे हैं। झमकत जुगनू तिमिर जमकत जान बात सियरात लगैं गात हहरेरे हैं॥ गोकुल न ऐसी समै पीको कलपैयै कल पैयै बलि जैयै कहा त्यौरन तरेरे हैं। एतिक कठोर होत हियो तरुनीन को री याही तें उरोज होत कठिन करेरे हैं॥ ३७३॥

सोरठा।

जगजीवन को दन्द, उदै होतहीं तम हरै।
छीरसिंधु को नन्द, क्यों न उजेरो होइ ससि॥

तृतीय सम लक्षण।

सिद्ध होत सोई अरथ उद्दिम करिए जौन।
बिना इष्ट अश्लेस पद सम कहि तीजो तौन॥

यथा ।

कोटिन भाँतिन कै छलकी बतियां तब तौं हिय लाइ लये हो । देखति हौं तो भले जु भले प्रगटो नितहीं नित नेह नये हो॥ गोकुल- नाथ चलौ उतलों जब जैसो भयो तब तैसो भयो हो । चाहतही तुम सों वह मान सो नीको कस्यौ तुम मान दये हो ॥ ३७६ ॥

सोरठा ।

वह चाहतहीं साल, सारस कर बनिता नई ।
तुम बलि दई दुसाल, मुकुतमाल दैकै लई ॥

विचित्र लच्चण ।

उद्दिम फल विपरीति को करि विचारियै जौन ।
अलङ्कार सु विचित्र सो है बिचित्र अति तौन ॥

यथा ।

गोकुल कहत आज अजब तमासो लख्यौ नरन को तरनितनुजा जू के तीर में । कुन्दन सों अंग धसे धोवत उमंगभरे घन कैसो रंग- भरो चहत सरीर में ॥ राखिवे को लच्छि हिए

लच्छि त्यागि त्यागि एकै फूल भरे कूल बैठे धरैं मति धीर में। पीरो कियो चाहत हैं चीर ते पखारत हैं बीर इन्दीवर ऐसे जमुना के नीर में ॥ ३७९ ॥

सोरठा।

श्रुतिपथ लागे नैन, चहत नसायो श्रुतिपथहि।
हिय उभरोहौं हैं न, गहिरौ हौं चाहत भयो ॥

अधिक लक्षण।

अधिक होत आधार जहँ पाइ बड़ो आधेय।
कहत अधिक ऽलंकार तहँ जे हैं सुमति अमेय॥

यथा।

बेलि बूटी गुलुम बिटप बर बृन्दगन दनुज मनुज पसुपच्छिन के कीस के। सरित समुद धाराधर धाराधर धरा दिसन समेत लोक दिग्गज दिगीस के ॥ गोकुल नखतगन ग्रह व्योम वायु तेज सुरन सहित सुरपति बिसे बीस के। इतनो जगत जाके उदर बसत सोई सोवतु है जगदीस ऊपर फनीस के ॥ ३८२ ॥

अपरञ्च।

मुरली मुकुट औ लकुट बनमाल गरें गुन की बिसाल छबिपुंज भरी भारी है। किंकिनी ललित सो बलित बिलसति लोनी काछनी कलित कटि पीतपट वारी है॥ गोकुल बिलोकि कौन सकत सकल सोभा पानि पाय पेखि जाति पलक न पारी है। रावरे के नैनन की कहाँ लौं बड़ाई करौं जिन में बसत भावती जू गिरिधारी है॥ ३८३॥

सोरठा।

सब जग जाके होय, बसत सो गोकुलनाथ है।
उर धरि राख्यौ तोय, तैं ताको कहिये कहा॥

द्वितीय अधिक लच्छन।

अधिकाई आधार की लहि अधेय अधिकाय।
अलंकार सो अधिक है दूजो अति सुखदाय॥

यथा।

सासन सों पिता के सिंघासन सो त्यागि आइ कीन्हो बनोबास धर्‍यौ बलकल चीर को।

दैतन सँघारि कै बिहार दंडकारन को टारि दयो सोच सो सकल ऋषिभीर को ॥ गोकुल कहत आए कुंभज के धाम राम हरष कह्यौ न जात मुनि के सरीर को । जिनके उदर में स॰ माइ गो समुद्र ताके उदर समातु है न जस रघुबीर को ॥ ३८६ ॥

सोरठा ।

गिरि ते उरज उदार, तू उरमें गिरधर धर्यौ ॥
तो बेनी को भार, नहिं तो सो धरि परै॥३८७॥

सूक्ष्म लक्षन ।

तनु आधेय लहै परै जहां सु तनु आधार ।
तह सूक्ष्मलंकार है बरनत सुमति उदार ॥

यथा ।

पंकज से पग पानि लसैं चख चंचलता न लखी चपला में । चंद सो आनन पीन उरोज कसे भुज कंचुकी कोर बला में ॥ गोकुल रोम-वली त्रिवली भरी नाभि सरोवरि कामकला में । लाल मिलाइहौं बाल तुम्हैं वह जाकी करी कटि छीन छला में ॥ ३८८ ॥

सोरठा ।

मन यासों लपटाइ, बलै भयो बलि लाल को ।
यातें कछुक लखाय, लंक छबीली छैल को ॥

अन्योन्य लच्छन ।

जहां परस्पर हित तहां अन्योन्यालंकार ।
ज्यौं मनिमालन तें उरज लसत उरज तें हार ॥

यथा ।

वै उनसों रति को उमहैं फिरि वै उनसों विपरीति कों रागैं । वै उनको पटपीत धरैं अरु वै उनहीं सो निलंबर मागैं ॥ गोकुल दोऊ भरे रसरंगनिसा भरि यों हिय आनंद पागैं । वै उनको मुख चूमि रहैं तब वै उनको मुख चूमन लागैं ॥ ३९२ ॥

सोरठा ।

रँग गोरे सो स्याम, लसत गोराई स्याम लहि ।
घन तें दामिनि काम, दामिनि तें घन घन फबै ॥

विशेष लच्छन ।

सो बिसेष आधार बिनु जहँ अधेय सुखरास ।
ज्यौं बिछुरेंहूं मीत के लगो रहत मन पास ॥

यथा।

जोई चहै हम सोई कहैं वे भरी हित प्रेम महा महती हैं। स्रौन सुधा सम चातिक प्रान को स्वाति के बूंदन लों लहती हैं॥ गोकुल जे हीं अलीमन कों मधु सी बिषके गुन ते गहती हैं। मोहन के मथुरा के गएं अब वे बतियां हमकों कहती हैं॥ ३९५॥

सोरठा।

वैसेई करि अंग, वैसेही वैसी गढ़त ।
बसी छाड़ि रति रंग, तो सौवी संग लाल के॥

द्वितीय विशेष लच्चन।

बहुत ठौर कहियै जहां एक वस्तु को बूझि।
यही विसेष कहैं जिन्हें परत सास्त्र मत सूझि॥

यथा।

कोठरी आंगन पौरि गली में अली गुरुलोगन में महती हौं। घाट में बाट में गोधन ठाट में कुंजन पुंजन में गहती हौं॥ गोकुल नाथ बनो नट सो तट लागो रहै तुमसों कहती

हौं। नैनन में मन में हिय में जिय में वह मूरति मैं लहती हौं ॥ ३९८ ॥

सोरठा।

सब छिन सांझ सबेर, और बाग बन घर गली।
सुनत बाँसुरी टेर, बौर बुरौ बसिबो इतै॥३९९॥

तृतीय विशेष लच्छन।

थोरेहीं आरंभ्य जहँ पैये वस्तु अलभ्य ।
यहौ विसेष कहै सुनो जेहैं जग में सभ्य ॥४००॥

यथा।

सोवत हूं जागत हूं सौतुक सपन हूं में रावरे को मन और बाम में न लेख्यौ मैं। सेवाही मों उचित रुचति रेनु पाइन को चाइन सों इन्हैं भली भांतिन सरेख्यो मैं ॥ गोकुल कहत चिर जीयो पियो आनंद कों तुम सो न भागभरो भू पै और पेख्यो मैं। दंपति तिहारो प्रेम अति अभिराम सुनो आम कहौ आजु सीताराम जू को देख्यो मैं ॥ ४०१ ॥

सोरठा।

सखि लखि बदन उजास, पाटीबंदन माग यों।
बोली ससि के पास, लही त्रिबेनी तो लखे ॥

व्याघात लच्चण ।

अन्यथा कारी है तथा कारी सो व्याघात ।
तथाकारि औ अन्यथा कारी जहँ ह्वै जात ॥

यथा ।

मोहन के बिछुरे सजनी दुखदानि लगै सुखदानि हो जोई । चौसर चंदन चारु दुकूल लगैं सखि सूल से हैं सब ओई ॥ गोकुल ख्वैबे को चांदनी में जो कहै तू कहा है अरी भ्रम भोई । जौन उबारत हो तन ताप सो जारतु है ब सुधाधर सोई ॥ ४०४ ॥

सोरठा ।

सुख कर हुतो जो प्रेम, अलि सोई दुखकर भयो।
सो पावत कहँ छेम, बसत जो पास अहीर के॥

द्वितीय व्याघात लच्चन ।

सो कारज निर्बंह्य जहँ अपने है अवदात ।
कार्ज बिरोधी होइ सो यहौ कहैं व्याघात ॥

यथा ।

क्योंकरिकै कहिये तुम जाहु न जाहु कहौ तौ चलैगो बलोना। जौ न लिख्यौ दुख औ

सुख भाल सो कोटि करै निघटै गोपलो ना ॥
आए हौ बूझन मोसों मया करि गोकुलनाथ
पियारे छलो ना । दारी कहौ बनवारी गई
बलि प्यारी कहौ तो रहो जू चलो ना ॥४०७॥

सोरठा ।

जौ प्रभु जानत मोहि, दीन दूबरी अति दुखी ।
तौ न छाड़िबे तोहि, दीनबंधु करुणाअयन ॥

कारनमाला लक्षण ।

जहँ पूरुब पर हेतु की गुंफित कीजे माल ।
कारनमाला कहत हैं ताकों सुमति बिसाल ॥

यथा ।

कौन घरी हुती जो गई हो कालिंदी के तीर
बीर धों कहातें परे नैन वा बिलासी में । नैनन
तें लोभ बढ्यो लोभ सो लगनि बाढ़ो लगनि
से बाढ़ो मन डरत न हांसी में ॥ गोकुल ति-
हारी सौंह मनतें बिरहबाढ़यो बिरह तें बाढ़यो
प्रेम फांसे लेत फांसी में । प्रेम सों बढ़ो है बड़ो
चौचंद चढ़ो है देखो घैर घरहाइन में बैर ब्रज-
बासी में ॥ ४१० ॥

सोरठा ।

लखि चख बाढ़्यौ नेह, बढ़ी नेह तें लगनि चित।
अब सखि दाहतिदेह, बिरहागिनिबढ़ि लगन तें॥

एकावली लक्षण ।

गहिगहि छोड़त अर्थ को जहँ सेनी की रीति ।
जपमाला कैसी बढ़ी एकावली सु रीति ॥४१२॥

यथा ।

कहत सलोनौ सब साँवरो अहीर एरी बीर को सौं कौन गुन वामें उभरतु है । औचक प्रभात जात गली में बिलोक्यौ आजु ताछिन तें ही में बिरहानल बरतु है ॥ गोकुल जहान में सुनति उपखान है री सुधा सुधा ऐसो बिष बिष सो टरतु है । रूप लाग्यौ नैनन सों नैन मिले मन सोई मन लग्यौ प्रान पापी पीड़ित करतु है ॥ ४१३ ॥

सोरठा ।

घर तजि आँगन आइ, आँगन तें काढ़ि पौरि पैं।
पौरिछोड़ि बनजाय, फिरति बावरी लों बिकल ॥

मालादीपक लच्छण।

होत जहाँ एकावली औ दीपक को संग ।
मालादीपक लसत ज्यौं मिले पयोनिधि गंग ॥

यथा।

मन परबस होत गोत में अकस होत सो तच्यौ चबाय को समुद उभरतु है। छीन होत अंग पीन होत रंग पीरो हीरे ज्वाल सी जरति चैन बारि सो ढरतु है ॥ गोकुल गसीले होत गुनगरुवे जे हरुवे ते अरसीले होत जस उतरतु है । नैन लागे नैनन सों नेकौ न लगति नैन पल को परति है न चैनन परतु है॥ ४१६ ॥

सोरठा।

धुनि स्रौन न परिजाय, जायनगुनिदुरजनसजन।
जन तन मन न सोहाय, हायबाँसुरी गोप कर॥

सार लच्छण ।

अर्थन को उतकर्ष जहँ उत्तर उत्तर होत ।
अलङ्कार सो सार है बरनत हैं कवि गोत ॥

यथा।

सुमति भली है फेर सरधा भली है तासों

रसना भली है हरिगुन उचरन की। तासों भली बिरति बिसास की हिये में और तासों भली कीरति भगीरथ बरन की ॥ गोकुल भली है भीर तासों उपकार की औ तासों भली सोभा रनभूमि के धरन की । तासों भलो असरन सरन बसाइबो है भगति भली है तासों गुरु के चरन की ॥ ४१८ ॥

क्रमिका लक्षण ।

जथासंख अन्वय जहाँ क्रम सों लैये जानि ।
तहँ क्रमिकालङ्कार है बरनत सुकवि बखानि ॥

यथा ।

सम्पति में बिपति में नृपतिसभा में छमा धीरज भलो है चातुरी के सरसाये तें। रन मन तरुनी सों रोष तोष रस रीति नीति सों करै तौ लहै आनँद सोहाये तें ॥ गोकुल सुकवि कहैं गरब गरीबन सों ऐंड़ दया मेड़ बाँधे बीरज के दाये तें । सत्रुन को मित्रन को परम पवित्रन को घालियतु पालियतु पूजियतु पाये तें ॥

सोरठा।

कच कुच चख चित बोल, चतुर कहै तरुनीन के।
कुटिलकठिनअतिलोल, नीतिनिठुरगरबनभरे॥

परजाय लक्षण।

एक बीच परजाय जहँ कीजे बहुत बिचारि।
अलङ्कार परजाय सो बरनत सु कवि निहारि॥

यथा।

जीव नहीं जगति ललितपन जोति आली पीत सी सुतापन के खिल की रई नई। सन्धि ह्वै अज्ञात भई ज्ञात भई ज्ञान बस ह्वै करि नवोढ़ाहि एँ पौढ़ा उर सों छई॥ गोकुल कहत लाज काम मध्य मध्या भई महाबली काम देखो लाज लूटि सी लई। छूटि परी छबि कैसी मूठि गौनहाई संग वहै बैस बाल अंग ह्वै गई तरुनई॥ ४२४॥

सोरठा।

तो कुच की अनुहारि, रही गरब गरुओ गहै।

* * * * *

द्वितीय परजाय लक्षण।

कै परजाय जहां कहै एकहिं ठौर अनेक ।
अलङ्कार परजाय सो कहत सु कवि गहि टेक॥

यथा।

रीति तैं पलटि कै अनीत में चलन लागै धरम छलन लागै अधरम काम में। सीलता सुधाई मूरताई बिसराई सबै कुटिल कुराई कदराई करै काम में॥ गोकुल सुकबि कहै सज्जन सों दूरि रहै संगति असज्जन की चाहै चारौ जाम में। देखो कलिकाल के नकाम ये करम मन सुमति को छोड़ि बसै कुमति के धाम में॥ ४०७॥

सोरठा।

जेहि हिय गहै सयान, अरि अलि तू आई चितै।
तेहि अब नच्यौ सयान, सौक भांति धीरज धरैं॥

परिवृत लक्षण।

थोरो दै कै लीजिये अधिक सो परिवृत नेत ।
पीत हरा लख तै कोऊ लाल बिरानो लेत ॥

यथा।

बीचऊ न राख्यौ जैसो भाख्यौ तैसो भाख्यौ भलें ताको फल चाख्यौ मतिही तें छीजियतु है। साँच माँच साँच के हो साहिब सरस सिन्धु जैसो कौल कीजियतु तैसो कीजियतु है॥ गोकुल बिहारी हो तिहारी परमिति आगे और देखिबे कों न हिए में जीजियतु है। तनक देखाई पाव पाव परों प्रानप्यारे ऐसे और काहू को जू मन लीजियतु है॥ ४३० ॥

सोरठा।

तनक अधररस प्याइ, हाय कहा कहिये तुम्हे।
लयो लाल अपनाय, रूपसुधासागर अमल ॥

परिसंख्या लक्षण।

करि निषेध थल एक तें राखी औरै ठौर।
वस्तु धर्म गुन जाति जहँ परिसंख्या तेहिं ठौर॥

यथा।

बेल बीच कराटक औ साल सालवाफन में शूल के समूह रहैं बेदन के घर में। बङ्कता क-

लङ्क ससिशृंग में सरेखी परै रहै है सँताप सही सूरज के कर में ॥ गोकुल कहत रह्यौ दारिद्र दरिद्रही को नीरसता मही में रही है मरु धर में । बैठतही रामचन्द्र रावरे के राज रह्यौ रिन्द नाममाहि अरबिन्द सरवर में ॥४३५ ॥

सोरठा ।

उरज उचाई लङ्क, तनुताई चखचपलता ।
सब जग तें बिनु सङ्क, लै बिधि कै एकत धरी॥

विकल्प लक्षण ।

तुल्य बल बीच विरोध जहँ लखौ बरनिये आनि।
नित्यनियमजहँहोतनहिंतहँबिकल्पअनुमानि ॥

यथा ।

जानि परै जू खिलार बड़े अरु फाग के खेलिबे में निपुनै हौ । चाव चढ़ौं चपला सी हैं वै उनकी तन छाँह न छूवन पैहौ ॥ संग सखानि लये तुम गोकुलनाथ जबै बरसाने में जैहौ । श्रीबृषभानलली को सखीन सों जीतिहौ कै बलि हारि कै ऐहौ ॥ ४३६ ॥

सोरठा ।

उनकी कुचन समान, सानु कहौ कलधौत के ।
सुनि बनि परमसुजान, ह्वैहै कै ह्वैहै नहीं ॥

समुचै लक्षण ।

बहुत भाव के गुँफ जहं एक समै में होत ।
कहत समुचै ताहि सब जेहैं कबि के गोत ॥

यथा ।

रमै पति संग रतिरंग में उमंगभरी सरस सुढंग पढ़ी कामकला बंक में । ससकि सिकोरै नाक जोरै चखचातुरी सों ऊबीसी उकसि भरै भावतें को अंक में ॥ गोकुल को अधरमधुर मधुप्यावै पियै * * * * * * * मुरति परजंक में । गौहीं सतरौहीं होति बिहँसि लजौहीं हेरि सङ्कि सी सिकुरि कै लचक डारै लङ्क में ॥ ४३९ ॥

सोरठा ।

ससकिसिकुरिसतराति,बिहसौहींभौंहनिचितै ।
नटति छुटति बतराति, रतिरस राती लाल सों ॥

द्वितीय समुच्चै लक्षण।

अहं शब्द को कीजिये जहाँ प्रथमही रूप ।
यही समुच्चै कहत हैं जे जग में कविभूप ॥

सोरठा।

मेरो गुन लखि रूप, तुल न होत रतिमति भरी।
मेरेही बस भूप, जन तन मन धन दै भयो ॥

यथा।

पूत इन्द्रजीत सो सपूत सब भाँतिन में जङ्ग जुरे जाके होत देवता न नेरे हैं। भाई कुम्भकरन सहाई रनभूमि भिरे जातुधान बलवान सुभट घनेरे हैं॥ गोकुल कहत कहा मानुष विचारे दाइ बानरौ समररूढ़ होत कहूं एरे हैं। सङ्कर समेत जापै तौल्यौ रजताचल को हेरे कीस बीस ऐसे दोरदण्ड मेरे हैं॥

कारकदीपक लक्षण।

क्रमगतिभावसमूह को जहाँ गुंफ ह्वै जात ।
कारकदीपक कहत हैं जे जग मति-अवदात ॥

यथा।

आइ मिलै निति साँझ भये चितचोप छये

सिगरी निसि जागैं। अंग अनङ्ग तरङ्ग प्रकासत दोऊ दुहून सों आनँद पागैं॥ गोकुल भोर चलैं घर को चित ऐसे बिछोह के छोह सों तागैं। द्वैक चलैं पग फेरि थिरैं फिरि दोऊ दुहून बिलोकन लागैं॥ ४४५॥

सोरठा।

नटतिकहतिनटिजाय,कहतिगहतिगकऔगरब।
मैं करि थकी उपाय, पी पायनि पारी चहति॥

समाधि लक्षण।

कारन अन्तर को जहाँ लहि कै समै सहाय।
कारज को को कार्ज जहँ तहँ समाधि ह्वै जाय॥

यथा।

सति भाग भरी है अरी वह ग्वालिनि गोकुलनाथ के प्रेम पगी। अति रूपमई नख तें सिखलौं तरुनापन की तन जोति जगी॥ जबलौं मिस कै पिय पास चलै हुती जोन्ह की जोति बिलोकि ठगी। घन कै तम को तबलों दिसि घेरि घटा घन की घहरान लगी॥ ४४८॥

सोरठा।

आइगयो पिय गेह, कछु कारज को मिस लये।
सखि विधि राख्यौ नेह, नँदनन्दन त्योंहीं चल्यौ॥

प्रत्यनीक लच्चण।

जहाँ पराक्रम पच्छ पर बली सत्रु के होत।
प्रत्यनीक बरनत तहाँ जेहैं कवि के गोत॥४५०॥

यथा।

मानति नाहिँ मनाय थकी सुनि हारि रही करि कोट कला कों। हौं इतकी हितकी मिति चाहि चुग्यौं न धरी मन मोद पला कों। भावतो जू हितु ह्वै तौ सहाय करै जो चहौ उनके अब भला कों॥ रावरे के मुख सों गया हारि सतावतु है ससि नन्दलला कों॥ ४५१॥

सोरठा।

तो कच तें घनहारि, बैर भयो बारिद परै।
इतको हित निरधारि, गरजि गरजि तरजैंउन्है॥

काव्यार्थापत्ति लच्चण।

जहाँ अर्थ कैमुत्तको कहि कीजै पद सिद्धि।
काव्यार्थापति कहत हैं अलङ्कार बुधिनिद्धि॥

यथा ।

श्रीवृषभानलली अँग तेरे कह्यौ सिगरे उपमान को गञ्जन । पाइन कञ्ज उरू कदली कुच कोकनहूं को कियो मद भञ्जन ॥ गोकुल आनन इन्दु अमी निदरै मुसुकानि करै मन रञ्जन । जीति लयो इन तीछन बाननि ईछन सौहैं कहा कहैं खञ्जन ॥ ४५४ ॥

सोरठा ।

तो कुच तें गिरिसानु, हारि हारि पाहन भये ।
को सम कहत अयान, का ये श्रीफल तनक से ॥

काव्यलिङ्ग लच्छण ।

जो समर्थ जेहि काम में ताको कहिये अर्थ ।
जा कारज में कहत तहँ काव्यलिङ्ग सामर्थ ॥

यथा ।

लाजन तें गुरुलोगन को न कछू मैं कह्यौ अब लौं दिन खेये । क्यों बकबाद बढ़ावति है चलि जाहि जितै हित को चित भेये ॥ गोकुल-नाथ बिसासी के और कहाँ लगलौं कहि ऐगुन

रे ये । क्यौं करि मैन सतैहै उन्हें उनतौ उनकी कुच शङ्कर सेये ॥ ४५७ ॥

सोरठा ।

मान तपनि तिय अंग, कौन भाँति रहिहै अरी।
लहि पूनो परसंग, देखि सुधासागर उदै॥४५८॥

अर्थान्तरान्यास लक्षण ।

कहि सामान्य बिसेष कहि यों अर्थान्तरन्यास ।
मिटत खेद याके लखें ज्यों जलधर तें प्यास ॥

यथा ।

जोई घरी थिर ह्वै मन दै कमलापति को धरि रूप निहारै । सोई परै भव बारिध पार दसौंदिसि में जस जोति पसारै ॥ गोकुल पाइ- न कै निकसी हरि के सिगरे जग कों निर- धारै । तारति देखो चराचर को यह भागीरथी अघओघ बिदारै ॥ ४६० ॥

सोरठा ।

होइ न कौन कठोर, निति बसि हिय तरुनीन के।
लखि बलि उरजन ओर, और कहाँ लगहौं कहौं॥

अपरञ्च ।

गोकुल हेरि बली-गुन-कीमति कोमलता कछु काढ़ि नई को । फूलन के धनु बानन सों मनमत्थ मथै सिगरी जगती को ॥ कौन करै अचरज्ज अरी समरत्थन की लखि ये करनी को । बाँस की बाँसुरी बाय भरी यह बेधति है तरुनीन के ही को ॥ ४६० ॥

द्वितीय अर्थान्तरन्यास ।

कहिये प्रथम बिसेष जहँ फिरि सामान्य सरूप।
सो अर्थान्तरन्यास है दूजो सुनहु अनूप ॥४६३॥

तथा ।

मन्दर सो गरु सारमई जेहि टारि सकै न सुरासुर जैहैं । सो रघुनाथ भुजान के जोर सों घोर पिनाक को टूक करैहैं ॥ गोकुल बैस किसोर चितै मिथिलापुर के अचरज्ज नए हैं। कौन अकत्थ कहै इतनो समरत्थ बलीन के कारज एहैं ॥ ४६४ ॥

सोरठा ।

खल कल लेन न देत, ससि बैरी बिरहीन को ।
बलि एसोई नेत, कहत कलङ्किन को जगत ॥

विकस्वर लक्षण ।

कहि बिसेष सामान्य कहि फिरि बिसेष को रूप।
कहत बिकस्वर कवित में तासों सब कबि भूप॥

यथा ।

बारिद बाँधि सिलानि सों राम जू लै कपि को दल रावन मास्यो । कारज ए समरत्थन के चहिये इन को न अकत्थ बिचास्यो ॥ गोकुल देत कहें सो सुनो सत मानि हिये मति में निरधास्यो । गोपन के हित हेत गोपाल लखौ सिसुतापन में गिरि धास्यो ॥ ४६७ ॥

सोरठा ।

सिर चढ़ि बढ़ि नत कैम,भए यहै गति बड़न की।
लघु गुरु भए बिसैम, उरज तनेने हैं तऊ ॥

प्रौढ़ोक्ति लक्षण ।

काहू के उतकर्ष हित हेतु बरनियै और ।
अलंकार प्रौढ़ोक्ति सो बरनत कबि सिरमौर ॥

यथा ।

पान किए हू दवानल कों जेहि को अधरा रस नाहिं डढ़ै री । ताके लगी मुख सो यह

जाइ तौ ज्वाल सी तानिनि क्यों न गढ़ै री ॥
गोकुलनाथ के हाथ बसो है बिसासिनि नाथि-
बे हो को कढ़ै री। छेदति या हियकों बँसुरी
सखि पाहन फोरि कै बाँस कढ़ै री ॥ ४७० ॥

सोरठा।

तो भौंहन की रेख, लिखि परै ऐसी हिए ।
चित दै है अनिमेष, करी काम कमनैत की ॥

सम्भावना लक्षण।

एसो होइ तो होइ यों करियै ऐसो तर्क ।
अलंकार सम्भावना कबि कमलन को अर्क ॥

यथा।

संकर सेइहै खेइ बड़ो तप लेइहै जौ पर-
दान महैतू। काम सो कै हितमाम सरूप को
माँगि सुधा सों सवारि नहैतू॥ गोकुल सूर की
पूरी प्रभा तन छीरसमुद्र में न्हाइ रहैतू । एरे
सुधानिधि एती बनै सरि राधिका के मुख की
तौ लहैतू ॥ १७२ ॥

सोरठा।

अंधतमस के कूप, परै न्हाइ निति कालिंदी ।
तौ रोमावलि रूप, लहै पन्नगी तौ तनक ॥

ललित लक्षण।

वस्तु तर्कि जहँ वाक्य कै अर्थ वर्णि अनुमान ।
जहँ बरनौ प्रतिबिंब तहँ ललित कह्यो सुखदान॥

यथा।

मानि चवाइन को कहिबो मिलिहैं बड़-ताप कै ताप जरै का। फेरि परौगी हहा करि पाइन रूसि गये पियपाय परै का ॥ गोकुल-नाथ मिलें बिनु जौं निमि नास भई फिरि मान मरै का। जोबन वैसिही बीति गयो बिरधापन में पुनि ब्याह करै का॥ ४७६ ॥

सोरठा।

बिनु सहचरी सहाय,मिल्यो चहति नटनागरहि।
कछु सखि कह्यो न जाय,बिनपाइनचलिबोचहै॥

मिथ्या लक्षण।

जहँ मिथ्या को सत करै कहि मिथ्या जन और ।
मिथ्याध्यवसित कहत हैं अलंकार तेहिं ठौर ॥

यथा।

गोकुलनाथ सुनौ बन में यह आजु बड़े अचरज्जहि लेख्यौ। एक ससा गहि दौरि कै

सिंघहि फारत पेट पछारत पेख्यौ ॥ मीत कहौं यह सो सब साँच है ईश्वर की महिमा अव- रेख्यौ। इंदुर एक दुरद्द कों आजु नदीतट में रह्यौ लीलत देख्यौ ॥ ४७९ ॥

सोरठा।

मैं चढ़ि सौध अमन्द, गहे मूठि भरि कै नखत।
मीत महूं गहि चन्द, अंक लए कबलौं रह्यौ ॥

प्रहर्षन लक्षण।

जतन बिना जहँ होति है मन वांछित की सिद्धि।
कहत प्रहर्षन सुकबि सब अलंकार में रिद्धि ॥

यथा।

न्हात लख्यो जमुनातट जाकी सुबास की आस लगी अलिसैनी। चारु चकोरन की अ- वली मुखचन्द सो चाहि रही सुखलैनी ॥ गो- कुलनाथ बिलोकि बिकाने से दूतिन को निधि लों कहि दैनो। ईठ बसीठ सुनो तब लों पठयो उहि आपुहि अंबुजनैनी ॥ ४८२ ॥

सोरठा ।

सुनि हरि के गुनगान, मै लज्जचौहीं ह्वै रही ।
आइ गयो सुखदान, आजु अचानक भौन में ॥

द्वितीय प्रहर्षन लच्छन ।

अधिक अर्थ की प्राप्ति जहँ मनवांछित में होत।
यही प्रहर्षन मिलति ज्यौं मुकुता चाहत पोति ॥

यथा ।

हीरो छेदाय छिलाय के अंगनि हाट अनेक फिरे न थिराने । गोकुलनाथ सनाथ के हूबे को हेरतही मन में ललचाने ॥ आपुन के कर में बसिबे को ये याही तें रावरे हाथ बिकाने । भाग लखौ मुकुतान को एजू हरा ह्वै उरोजन सों लपटाने ॥ ४८५ ॥

सोरठा ।

सुनिबे को तो-बैन, खरे पौरि पासहिं हुते ।
अमित लह्यो हरि चैन, दयो कृपाकरि तुम चितै॥

तृतीय प्रहर्षन लच्छण ।

कारनबिन जहँ होत है लाभ तुरितही सिद्धि ।
यही प्रहर्षन कहत हैं अलंकार में रिद्धि ॥४८७॥

यथा ।

गोकुलनाथ मिल्यौ तट पै धरि कै इकठे पट साथही न्हायो । जात रह्यो चितचोर कहीं हो मरू करिकै घर धाम लों पायो ॥ भाग कहा कहिये अपनो चह्यो दूतिन को धन दै कै पठायो । ईठ सुनौ कहिये तबलौं वह ढीठ बसीठ ह्वै आपुहीं आयो ॥ ४८८ ॥

सोरठा ।

धन दै पठै बसीठ, आवतहो अपने सदन ॥
मिली बीचही ठीठ, ईठ पीठि देत न बनी ॥

बिषादन लक्षण ।

मनबांछित में होत जहँ अर्थबिरोध अमान ।
कहत बिषादन कुंद ज्यौं लहत उदै ते भान ॥

यथा ।

आजु कह्यौ मनभावन सों मैं अटा पर फूलन-सेज बिछैये । चैत की चांदनी चाव बढ़ी मो निसा भरि कै रतिरंग मचैये ॥ गोकुलनाथ कहैंगे कहा सखी कौन उपाइ किये हिय लैये ।

आइ गयो पति हाइ विदेस तें जाय कहै न कहा कहौं दैया ॥ ४९१ ॥

सोरठा।

मैं चाह्यो गहि पीय, हिये लाय आनँद भरौं।
त्यौं घरहाई तीय, आइ गई वैरिन वरी ॥

उल्लास लच्छन।

गुन तें गुन अरु दोष ते दोष होत उल्लास।
दूषन तें गुन होत जहँ गुन तें दूषन पास ॥

गुन तें गुन यथा।

पाइन पीड़री जंघ नितंब भरी विधि लंक लोनाई हितै कै। नाभिथली बलि रोमवली कुच कुंभनि कै करिकुंभ जितै कै ॥ गोकुल पानि भुजानि लखि मुख नैनन देत अमी अमितै कै। क्यौं बस होहि न भावती जू मन भावतो रावरो रूप चितै कै ॥ ४९४ ॥

गुन ते दोष यथा।

सोर पर्यो सिगरे जग में उलह्यो ब्रजभूप को पूत नयो है। देखिवे को उमह्यो सब लोग

लखें मन मोद की मूरिमयो है ॥ गोकुल हौंहू हिए हरखी चलि चाहतही गिरि ज्ञान गयो है । आंखिनही पद पैठि गयो ऽब वहै न टरी नटसाल भयो है ॥ ४६५ ॥

मुद्रा लच्छन

सूच्य अर्थ सूचन जहां प्रकृति अर्थ में होय ।
अलंकार मुद्रा तहाँ बरनत हैं कबि लोय ॥

यथा ।

मोर-किरीट छुटी डुलफैं मकराकृत कुंडल कान निरेख्यो । गुंजहरा मखतूल छरा कटि काछनि पीत पितंबर भेख्यो ॥ गोकुल गावत बेनु बजावत रूप सों मैन लजावत लेख्यो । है सुधि तोहिँ अरी जमुनातट पै नट जो वह वा दिन देख्यो ॥ ४६७ ॥

रतनावली लच्छण ।

प्रकृत अरथ क्रमसों जहां बरनत हैं कबिलोग ।
अलंकार रतनावली ज्यों रतनन की जोग ॥

यथा ।

फागुन में मधु माधव में अरु जेठ असाढ़

लिखे मनमाने । सावन भादव आश्विन कातिक औ अगहन्नहु में न भुलाने ॥ गोकुल पूस में माघहु में वद औधि के झूठे कितेक ठिकाने । आवन के मनभावन जू के अरी सजनी परे मास न जाने ॥ ४९९ ॥

सोरठा ।

पग पिडुरिन चढ़ि लंक, वलि रोमावलि उरजपै ।
सनमुख रूप असंक, लहिभूलो कच घन गहन ॥

तदगुन लच्छन ।

छोड़ि आपुनो गुन जहां औरन को गुन लेत ।
अलंकार तदगुन तहां वरनत हैं करि हेत ॥

यथा ।

भार भयो बिरहानल झार सों भौन भटू इतनो तपयो है। स्वास समीर की लूवन ते मनो ईंधन के ढिग जान गयो है ॥ गोकुल पीतम प्यारे बिना करि जात कछू न उपाय नयो है। भावती के तनताप-तपे यह माह अरी जरि जेठ भयो है ॥ ५०२ ॥

सोरठा।

पहिरावति नहिं संक, मुक्तहरा तिय के गरे ।
लखि लचकौहीं लंक, बारभार तें होत गुनि ॥

पूरुब रूप लच्छन।

तजि औरन को गुन जहां गुन अपनोई लेत ॥
पूरुबरूप तहां सुकबि बरनत हैं करि हेत ॥

यथा।

भागभरी ठकुराइनि जू तिय और न आपुन सी अनुमानो। क्यौं न बसै बस भावन तो गुन रूप बिलोकि बिलोक मयानो ॥ गोकुल बेसरी को मुकुता यहि भांति लस्यो सुखमा सरसानो। लाल भयो अधरा रँग सों मुसुकानि-मढ़ो मुकुतै ठहरानो ॥ ५०६ ॥

अपरंच।

कै सब सेत सिँगार चल्यौ तुम भेटिबे को बन मै बनवारी। सोचति जौ मन को धनि तू लखि जाइबे को कछु हो न डरारी॥ गोकुलनाथ बिलोकि बलाइ ल्यौं चारुता चारु चहूंघा बि-

हारो । आठयें के ससिहू के अर्थात भई मुख रावरे को उँजिआरो ॥ ५०७ ॥

सोरठा ।

भयो सुतन तो स्याम, स्याम भयो तोतन सरस।
हो पहिचानी वाम, तुम्हें आजु मिलि के छुटै॥

अतदगुन लच्छन ।

संगतिहू गुन और को जहां लगत नहिं नेक ।
अतद्गुनालंकार तहँ बरनत कवि गहि टेक ॥

यथा ।

अंक में राखि निसंक सदा गत-बैर भई जब तें लरिकाई । नीति अनीति सहौं सिगरो हित रीति करो इनसों मनभाई ॥ गोकुल पीतम को लखि टौम न रोम करो सो कहो जू कहाई । प्रानपिया हिय रावरे को न सिखो है उरोजन सों कठिनाई ॥ ५१० ॥

सोरठा ।

बसि बलि बलि के संग, रही सदा गुन सों गुहो।
तऊ न ह्वै गइ भंग, तो नीवी की कृपिनता ॥

अनगुन लच्छन ।

पर सनिद्ध तें सिद्ध गुन ताको जहँ उतकर्ष ।
अलंकार अनगुन तहां बरनत कबि गहि हर्ष ॥

यथा ।

रातिजगे कहूं रंगपगे यह जो समुझो तुम सो सति नाही । नैनन को अरुनापनता लखि के भ्रम भूरी भरी मन माहीं ॥ गोकुलनाथ सखा सँग न्हात में केती तरंगनि मैं अवगाहीं । ह्वै गए औरऊ लाल सुनो परि रावरे को पग को परछांहीं ॥ ५१३ ॥

सोरठा ।

बुधिवर कहत कठोर, गोपख्याति जनपांति में ।
तुम बलि बाढ़े श्रोर, बसि हिए तरुनीन के ॥
अरी लाज रहि जाय, यातें ब्रजबनितान की ।
परि पुतरी न लखाय, स्याम सलोनो गात में ॥

सामान लच्छन ।

बस्तु दोइ सम रूप को जुदी न चाही जाति ।
सो समान्य बेनीमिली अलिअवली न लखाति ॥

यथा ।

ओपभरे हैं कछू उभरे हैं करी विधि आपने हाथ सँवारे । गोकुल रोमवली सों खिले अलि की अवलीन को हैं प्रनधारे ॥ चारु सुगंध-सने सुखमा सुचिरंग-रँगे सुकुमारता भारे । कौल-कलीन के हार मिले न लली लखि जात उरोज तिहारे ॥ ५१७ ॥

मीलित लच्छन ।

वस्तु दोइ सम रूप की अवयव सो मिलि जाय।
सो मीलित ज्यों दूध में पानी परि न लखाय ॥

यथा ।

हौं तो रही मन में डरते गुन रावरे जानि सबै बनमाली । जो उनकै पग जावक दै कै हहा करि कै रति की रति पाली ॥ गोकुलनाथ सबै कढ़ती हित होती न जो कर को अरुनाली । लाल कछू कहतींऔ लली परती लखि ज्यों अँगुरीन की लाली ॥ ५१८ ॥

वैसेख्य लच्छन ।

मीलित में जहँ एक को बढ़ि गुन धर्म लखाय
सो वैसेख्य मिले सलिल ज्यों मिश्री मधुराय ॥

यथा।

मालती कौल कदंबनि छोड़ि सुबास की घास लए सुखदेनी। आनँद रंगमए भए भौंर रहै बढ़ि कै मढ़ि कै चढ़ि बेनी॥ गोकुलनाथ सुजान सही पै चली न कछू मति की गति पैनी। लालहिं जानि परी सजनी करकै परसैं अलकौ अलिसैनी॥ ५२१॥

उन्मीलित लक्षण।

जहँ मीलित गुन रूप को कछू भेद बिलगाय।
उन्मीलित सुरसरि मिले ज्यौं जमुना लखि जाय॥

यथा।

राति अँधेरी चितै नभ की सब स्याम सिँगार करै मृगनैनी। गोकुलनाथ चली हरि पै ज्यौं तामल पै जाति चली अलिसैनी॥ हौ हूँ गई सजनी सँग पै न लखी पथ मैं अखियाँ करि पैनी। बाल गई मिलौ कै तमजाल मैं जानि सुबास परी सुखदैनी॥ ५२३॥

गूढ़ोत्तर लक्षण।

गूढ़ोत्तर उत्तर जहाँ चतुराईजुत होय।
घाट पथिक नौका जहाँ बाढ़ी घनी घमोय॥

यथा ।

हाट सी लागति भौंरन की कुसुँभीं लतिकान को कुंज घनो है । छांहऊई छिरकी मकरंद पिकीन को ब्रुन्द न जात गनो है ॥ गोकुल बूझत हौ तौ कहौ जो अन्हाइबे को जमुना में मनो है । ठाट बढ़े सुख को लहिये वह जोबन के तट घाट बनो है ॥ ५२५ ॥

चित्रोत्तर लक्षण ।

चित्रोतर जहँ प्रश्न तें उत्तर कहौ न आन ।
इनको गयोरि मानको उनको गयोरि मान ॥

यथा ।

आनन चारु चलै चख है कुच-कोकन की उपमानता गोई। लोटपरी लखि लंक लफै सटि जंघ नितंबन के भर भोई ॥ गोकुलनाथ सों बूझो हों मैं उन उत्तर मोहि दया फिरि सोई। जाति हती घर को भरि कै जमुना तटतें घट नागरि जोई ॥ ५२७ ॥

सूक्ष्म लक्षण ।

चित्तब्रति लखि और का चेष्टा व्यंग्य समेत ।
करै जहां सूक्षम तहां कहत सुकबि जुत चेत ॥

यथा।

खेलत गँजीफा हुती लाड़िली अली सों आयो देवर परोसी जो हिए में हेलियतु है। जासों होइ सूरज सही सो डारि देहु कही सजनी सयानी यों हुकुम झेलियतु है॥ गोकुल सुजान जानि लयो जानिबे कों तौन कैसेहू न पैये मति ही को बेलियतु है। फेंकि दयो चंद चंदमुखी चातुरी सों चाहि पीतम कही यों आछो खेल खेलियतु है॥ ५२९॥

पीहित लक्षण।

व्यंग्य सहित चेष्टा करै पर वृत्तान्तहि जानि।
पीहित रतिश्रम खेद लखि बीजन दीन्हो आनि॥

यथा।

आइये बैठिये ऐंठिये आन न आपुन हौ महाराज महाजन। गोकुल हौं बलि जाति चितै गुन रावरे जानत कोऊ कहा जन॥ और कछू न कहीं इतनो कहि चातुर चारु छबीली सुसाजन। धोइबे को मुख पीतम के ढिग आनि धस्यौ जल सों भरि भाजन॥ ५३१॥

व्याजोक्ति लक्षण ।

जहँ छपवै आकार कहि अन्य हेतु के बोल ।
व्याजउक्ति ओहि बाग सखि भौरन डसे कपोल॥

यथा ।

लावत कोऊ न पौरि पै पापिनि बैरी बरी भरी-कंटक पैनी । बीरन सो कहिये री इहा करि काटिबे जोग इहै दुखदेनी ॥ गोकुल चातुरतापन सों इमि धाइ पै जाइ कह्यौ मृगनैनी । आवत हूं घर जात लगै फटि देखि गई सिगरी उपरैनी ॥ ५३३ ॥

गूढोक्ति लक्षण ।

औरै प्रति उद्देस करि कहैं और सों बैन ।
सो जानत गूढ़ोक्ति यह जिनकी मति अति पैन॥

यथा ।

देवर नन्द सखीन लए सब सासु गोसाइन तीरथ जैहैं । और परोसहु के सब लोग ते जाइहैं बीच बसे फिरि ऐहैं ॥ गोकुलनाथ लख्यो लखतै दुख बैन कहै जे सुनै सुखदै हैं ।

क्यों करि हौं या निसा सजनी इतने बड़े भौन में एकली रैहैं ॥ ५३५ ॥

विव्रतोक्ति लक्षण ।

गुप्त कहत अश्लेस जहँ कविजन सुमतिअगार ।
विव्रतोक्ती ऽलंकार तहँ बुधजन को सुखसार ॥

यथा ।

आनँदरूप भरी रस सों जू भली विधि सों विधि तोहि सँवारो । आपुनही सब सौतिन के तन जोबन को सिगरो मद गारो ॥ गोकुल चारु सुबास-सनो मुख पंकज है बलि जाइ तिहारो । चोर भयो निसि द्योस रहै यह भौंर भटू पियरे पटवारो ॥ ५३७ ॥

जुक्ति लक्षण ।

काहू के भै तें जहाँ छपिबे को आकार ।
क्रिया करै तहँ जुक्ति है जुक्तिभरो ऽलंकार ॥

यथा ।

देखतही हरि को पटओट भयो अलि जो मन कंजकली को । देखि झखी यों लखी सखी

धाय कै हाय भलो न सँकेत गली को ॥ गोकुलनाथ कियो सो कहैं तब आइ उपाइ सुनो नवली को। बैठि गई हँसिकै धसिकै पटओट रही गहि पाय अली को ॥ ५३९ ॥

लोकोक्ति लक्षण।

जहँ कहनाउति लोक की तहँ लोकोक्ति समाज।
अरी नैन लागे जहां तहां कहा डर लाज ॥

आई तरुनाई ओप औरै अंग छाई तेरे अंगनि गोराई की धसी सी धार चहियै। नैनन की बैनन की अधर उरोजन की रोमअवली की त्रिवली की कहा कहियै ॥ गोकुल कहत बीति गए ते बसंत फेरि अपनो अयान अपसोसन ही सहियै। आपुनही क्यों न मनमोहन मिलैंगे सुनो बीति गए पावस पयोधर उलहियै ॥ ५४१ ॥

अपरञ्च।

बैरभरैं घरबारे गाउबारे धरै आरैं सखिन को बैन सो करेजो कोड़ियतु है। तुम

आए जोग ल्याए भाए बैन भाखत हौं बारेहू की अति मति कैसे मोड़ियतु है ॥ गोकुल बिसासी लिखे पाती कछु ऐसी सुनो बाँचतही जाके चितचैन छोड़ियतु है । जौलौ देह दोषी यह तौलौं सब सहैं ऊधो जैसो बाढ़ बढ़ै तैसो पीठि ओड़ियतु है ॥ ५४२ ॥

छेकोक्ति लक्षण ।

जहँ परार्थ की कल्पना लोकउक्ति में होय ।
कहा अकेलो तरनि जो उयो तरैयनि खोय ॥

यथा ।

क्यौं समुझावति हौ हमकों हम जानति हैं कछु भेद न नीके । गोकुलनाथ भली तुमहूं तुमहूं को लगै सिगरे जन नीके ॥ आए भयो दिनचारि हमैं बसी आपुन हौं कब की सँग पी के । जानत हैं जगतीतल में सुनौ साधु सबै गुन साधुनही के ॥ ५४४ ॥

वक्रोक्ति लक्षण ।

काकुश्लेस में अर्थ पर जहां कहै निरवारि ।
धरी दान दै दूध की माँगे पैहौ चारि ॥

यथा ।

काम सतावतु है उनको छन बैठि रहैं श्रम की बहती है । प्रीतम के परसें सुख होत उलूकन की बतियां नहती है॥ गोकुल पौरिहि पैं हरि हैं गहि डारि तिन्है जो कछू चहती है। री कलपावति है हम यों कल पावति हैं तो कहा कहती है ॥ ५४६ ॥

काकु तें यथा ।

राति कहूं बहू के रतिरंग चले उठि कै घर को हरि जैसे । औचक आन गली में मिली ब्रुषभानलली जू अली सुनि तैसे ॥ हेरि रही नख तें सिख लों करि गोकुल लोयन लोल अनैसे । फूल की मालन सों गई मारि कह्यो फिरि कै मिलिहौ हरि ऐसे ॥ ५४७ ॥

स्वभावोक्ति लच्छन ।

सुभावोक्ति वै जाति के कहिये जहां सुभाय ।
लखत लाल के नौलतिय लखिचख लेत चोराय॥

यथा ।

भरि पाय घुघुरू निहारि नारि नाय लखै

अंचल उघारत गहत मनिमाल री । उतरत चढ़त दुरत दौरि घुँटुवन उचकि उचकि पलका पै हाल हालरी । गोकुल लसत चोटी नथुनी तनक छोटी दतियाँ देखावै मुख बनक बिमाल री ॥ ताकि मुख माय को हँसत किलकात क्यों न गोवै ताप नैनन को जोवै नंदलाल री ॥

यथा।

आँगी फटैगी कहूं तौ कहा कहि कै सह बामिन मै बसिहै गी । * * * * * * * ॥ गोकुलनाथ न मानत हौ हम लाजकी लेजन सौं फसिहै गी ॥ छोरौ चुनौनि न नीबी की लालन हेरि हमैं सजनी हसिहै गी ॥ ५५० ॥

अपरंच।

अंग अलसाने पियराने थहराने पग ठहराने परत सुडग मग मैंहै ना। छाई कुच स्यामताई चीकनाई केसन में नीबी उकसौंही भई त्रिवली उचौहैं ना॥ गोकुल कहत लाल लहैगी सलोनो चढ़ि याकै तन औरै चारुताई चित ऐंचै ना।

ढरकि सी भौंहैं परी भरी भार लाजन कें हर-
कि गई सी गति गदरावने नैना ॥ ५५१ ॥

भाविक लच्छन ।

भाविक भूत भविष्य को जहँ कहिये साच्छात ।
अब हूं देखि परै अरी वहै सांवरो गात ॥५५२॥

यथा ।

बार बड़े बड़री अखियाँ मुख चारु उरोजन ओज महा री । गोकुल रोमवली त्रिवली कटि छाम महा लखि जात कहा री ॥ काल्हि हती जमुनातट पै नख तै सिखलौं भरी कामकला री । नैनन में अबलौं है बसी वह नागरि नारि बड़ी नथवारी ॥ ५५३ ॥

उद्दात लच्छन ।

स्लाघ्यचरित रिधि अन्य को अन्योपलच्छित होत ।
परसि उदात सु होत जन गंगाजी को सोत ॥

स्लाघ्य चरित यथा ।

तोरि कै पिनाक मान मोरि भृगुनंदन को भगति के बस आए धीमर के धाम हैं । मारि

खरदूषन सँघारि बालि बीर कीन्हों सुगरीबै राज रहै बिपति ते छाम हैं ॥ बांधि सेत समुद में रावन को जीति दई लंका में बिभीषन कों जाके ऐसे काम हैं । गोकुल जगतईस बीस बिसे अभिराम जोग जपिबे के सुनो दासरथी राम हैं ॥ ५५५ ॥

रिधि चरित यथा ।

हाथी दए घोरे दए जरिन के जोरे दए और सुखपाल रथ गयन सो भोए हैं । मोतिन के माल दए मनिन के जाल दए भूषन बिसाल जे दरिद दुति गोए हैं ॥ गोकुल कहत राम राय को विवाह भए भिच्छुक न भूपन तें जुदे जात जोए हैं । एतो दान दयो महाराज दसरत्थ देखो गुनिन के गन सों न धन जात ढोए हैं ॥ ५५६ ॥

अत्युक्ति लच्छन ।

अत्युक्त्यतथ्य उदारता कहौ सूरता जौन ।
होत धनद भिच्छुक सुनो तुम सों मांगत तौन।

यथा ।

आजु कौन तोसी बार बधून के बृन्दन में अमल अनूप गुन रूप सों बढ़ति है । तेरे मुख अमित मधुर मुसुकानि सो है देखु निचुरी सी चंदचंद्रिका चढ़ति है ॥ गोकुल पियारे के हिया रे हरिबे को तुही काम जंत्र मंत्रन के तंत्रनि पढ़ति है । एरा भागभरी तेरो तान की तरं- गनि सों अंगनि अनंग की उमंगि सी मढ़ति है ॥ ५५८ ॥

निरुक्ति लक्षण ।

निरुक्ति नाम के जोग तें अर्थ प्रकल्पन आन । क्यौं न होहि माधौ स्वबस लखि बेनी सुखदान ॥

यथा ।

बक्करा गहाइ देहु होहूं लैं डगरि जाऊं सुनो भयो खरिका बिलोकें डरियतु है । नोखे कहा होत हौ अनोखी चोखी अँखियन सखिन के आगे तौ न ऐसे अरियतु है ॥ बबाकी सों तोहि ह्वैहै दाऊ द्वारही पै सुनो गोकुल पियारे पतिही

को परियतु है। सोहत सुधाकर से आकर गुननि भरे नीति करि लीन्हें हूं अनीति करियतु है ॥

अपरंच।

दूरिहि बैठी रहौ बरजैं जो भयो सो भयो ऽब कछू न कहौ जू। आपुन को अपराध कछौ न कछू तुम को बरजोर गहौ जू ॥ गोकुल जैसे हौ तैसे भले हौ भलेन के संग भलाई लहौ जू। पाय परैं दुख देत महा हम जानत हैं न कहा हरि हौ जू ॥ ५६१ ॥

प्रतिषेध लक्षण।

प्रतिषिध प्रसिध निषेध को अनुकीर्तन अभिराम। है न अहीरिनि औरही राधे है सुनु स्याम ॥

यथा।

गोकुलनाथ मनै करिये अबहीं तुमको हित सों ढरिबो है। श्रीठकुराइनि राधिका के अति दुस्तरही मन को हरिबो है ॥ कोऊ न कोऊ कहैगो सुनो यहि गाँव चवाइन में डरिबो है। है इनसों हँसिबो री सुनो उनके यह पायन को परिबो है ॥ ५६२ ॥

विधि लच्छन ।

जहँ बिधान सिधिवस्तु को तहँ बिधि २ सों भात।
परै जौहरी के सु कर तब मनि मनि ठहरात॥

यथा ।

चौसर चंदन सो चुपरे सुचि कंचन की रुचि सों भरि भावैं। उन्नत पीन कठोर महा मकरध्वज के करिकुंभ लजावैं॥ गोकुल कंचुकी बीच दुरे दुरि देखतहीं कुलकानि दुरावैं। लागत है पिय के हिय सों तब ओज भरे ते उरोज कहावैं ॥ ५६५ ॥

हेतु लच्छण ।

हेतुमान के संग जहँ हेत कही तह हेतु ।
बिघनहरन कों सामुहें बिघनेस्वर सुख देतु ॥

यथा ।

मानस सरोवर में फूलेई रहत तूले परमा परम पूरे परिमल माम के । कोट कमनीय रमनीय सुखमा के ओक लोक सब कीवे को असोक अभिराम के ॥ गोकुल लखत राते अरुन उदैं लों भरे भा ते हरे तिमिर अज्ञान

आठौ जाम के। धरु रे मोदाम मन मधुप सुजान मकरंद भरे कंज पद गुरु गुनधाम के ॥ ५६७॥

अपरंच।

दाहै न्याय पापपुंज बाहै पुन्यपथ पूर साधुन की सिद्धिन कौ बिपति बिथाहई। गुन गन गाहै चारु चातुरी उमाहै चारो फलन को राहै सुखदा है नितही नई ॥ गोकुल सराहै सब साहिनी को चाहै एक तूही तौ निबाहै सदा सरन सताई। माता भुवनेश्वरी तिहारी करुणा की कोर खलन कै दलन को मीच कलिका भई ॥ ५६८ ॥

दोहा।

भुवनेश्वरि जगदम्ब के भजियत चरनसरोज।
गोकुननाथ किया सकल अलंकार जुत चोज ॥

इति श्री काशीबासी रघुनाथकबिसुवन गोकुलनाथ कबिकृत चेतचंद्रिका अलंकारकथनं समाप्तम् ॥